Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ओ३म् मई १९७४

जनराज

मासिक

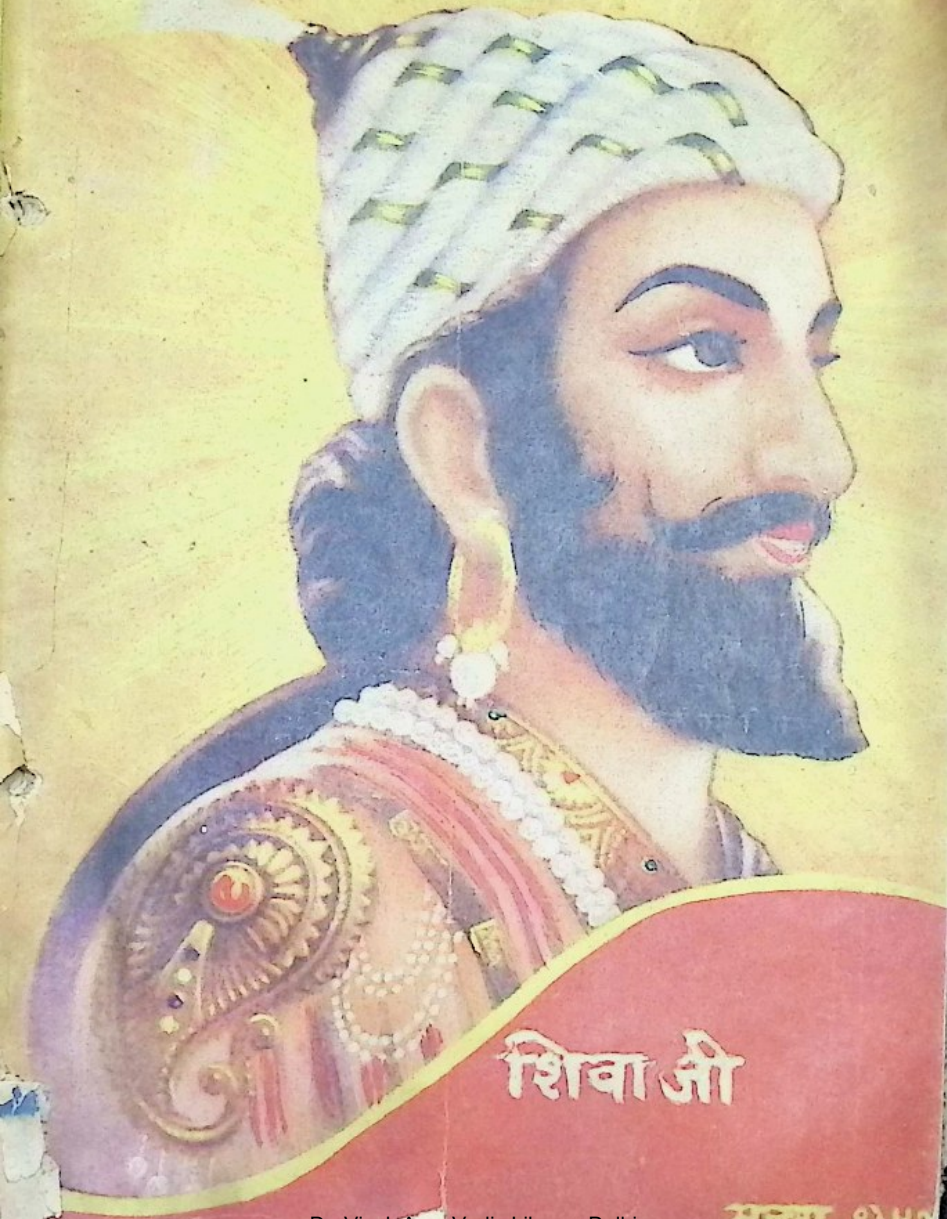

शिवा जी

मूल्य १)५०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ज्येष्ठ २०३१ | # अंक में पढ़िये | मई १९७४

१.	तुम जगोगे ? (कविता)		१
२.	सम्पादकीय		३
३.	** हृदय मन्दिर से लिख रहा हूँ		५
४.	समाजवाद और भारत	—बनारसी सिंह एम० ए०	११
५.	परा पूजा	—श्री अमर स्वामी	१९
६.	अर्जुन ने कहा था	—डा० रामदुलारे	२३
७.	अपराधो और दण्ड विधान	—अमलतास	२५
८.	सौरी वेरो सौरी (कविता)	—देवराज दिनेश	२७
९.	जीवन यज्ञ	—राजेन्द्रप्रसाद सिंह	३१
१०.	उपदेश का पात्रत्व	—लघु कथा	३५
११.	सूर्य चन्द्रादि में मनुष्य सृष्टि	—शंकरसिंह वेदालंकार	३६
१२.	महर्षि दयानन्द का योग बल	—राजेन्द्र जिज्ञासु	३९
१३.	कमंठ ! स्व० ला० चतुरसेन जो !	—दीनानाथ सिद्धान्तालंकार	४१
१४.	सरजा शिवाजो और नेहरू : प्रथम पृष्ठ व अन्तिम पृष्ठ परिचय		४९
१५.	अथर्ववेद परिचय	—गतांक से आगे	५५
१६.	नियमों का पालन	—रामशरण गुप्त	१०३
१७.	ध्यान करने की सरल विधि	—स्वामी लक्ष्मणानन्द	१०६
१८.	रामचन्द्र देहलवो	—जगदीश प्रसाद	१०८
१९.	असली गुरु मन्त्र · (कहानी)	—वचनेश	११०

वेद भाष्य का मूल्य अब १२४) है

—किन्तु—

"जन-ज्ञान" के सदस्य

केवल १०१) भेज कर

वेद भाष्य के सदस्य बन सकते है

हम चाहते हैं कि कोई जन-ज्ञान का सदस्य वेद भाष्य से वंचित न रहे

शीघ्रता कीजिए। - सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पंजीकृत ट्रस्ट

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली का प्रकाशन

जन-ज्ञान

(मासिक)

सम्पादक
—राकेशरानी

दूरभाष : ५६६६३६

—पता
१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग
निकट ३१-नाईवाला
करौल बाग, नई दिल्ली-५

वार्षिक मूल्य १५)
विदेश में—१ पौंड
आजीवन—२५१)

वर्ष ७ : अंक १
ज्येष्ठ संवत् २०३१
मई—१६७४

उन से ! जिन की देह में आर्य रक्त है—

तुम जगोगे क्या सभी कुछ,
खाक हो जाने के बाद।
तुम उठोगे क्या ऋषि के,
स्वप्न लुट जाने के बाद।
जानता हूं तुम बुलन्दी,
भाषणों से कर रहे हो।
कागजों पर, योजना में,
आज आगे बढ़ रहे हो।
किन्तु क्या यह सच नहीं है,
आज दुश्मन चढ़ रहे हैं।
और हम घर में सिकुड़कर,
स्वयं से ही लड़ रहे हैं।
क्या कहें, किससे कहें हम,
है कहाँ बाकी जवानी।
आज की झुलसी हवा ने,
दी मिटा सारी रवानी।
दाँव पर जीवन लगाकर,
जंग जीतें जो, हैं कहाँ वे ?
हैं कहाँ वे, प्राण देकर,
जो विजय के स्वर गूंजायें।
तुम दिखावों में उलझ कर,
आज मंजिल भूल बैठे।
भूल पर अपनी फिदा हो,
तुम सभी कुछ भूल बैठे।
राम की वह जय पताका,
कृष्ण का वह जय सुदर्शन।
प्रिय शिवा की तेग धारा,
खो चुके हो दिव्य दर्शन।
ज्ञान का भंडार भूले,
लक्ष्य की झंकार भूले।
भूल कर अपनी कहानी,
तुम विजय के गान भूले।
मैं जगाता हूं तुम्हें प्रिय,
जाग जाओ ! घर बचाओ।
"वेद" की लेकर पताका,
आज धरती को सजाओ।
लाल आंधी आ रही है,
काल आँधी आ रही है।
शत्रु सेना छा रही है,
जाग जाओ ! जाग जाओ !

—भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सत्यार्थ प्रकाश और वेद फैलाइए !

समाजवाद – राष्ट्रीयकरण

या

वेद का मार्ग

?

किस पर चलें आप ?

क्या है वैदिक अर्थ व्यवस्था ?

इन उलझे प्रश्नों का

प्रभावपूर्ण प्रामाणिक उत्तर पढ़िए

वैदिक

अर्थ–शास्त्र परिचय

[एक प्रभावपूर्ण पुस्तक]

लेखक–भारतेन्द्र नाथ

भूमिका लेखक–सुप्रसिद्ध उपन्यासकार श्री गुरुदत्त

समस्त उलझनों का हल

सारी समस्याओं का मार्ग दर्शन

'वेद' की छाया में–वेद की अर्थ नीति

मूल्य ८० पैसे—किन्तु प्रचार के लिए ६०) सैकड़ा

जन-ज्ञान प्रकाशन

१५९७—हरध्यान सिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

ज्येष्ठ संवत् २०३१

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तुम जिन्दा नहीं हो !

तुम से क्या कहूँ मैं, कहूँ भी तो क्यों, क्योंकि अनुभव बता रहे हैं कि तुम जिन्दा नहीं हो ! तुम सब सड़ी हुई लाश हो, एक बदबूदार चलता हुआ ढेर, तुम सड़ चुके हो, मर चुके हो ।

तुम्हारा गौरव, तुम्हारी लज्जा, तुम्हारा स्वाभिमान सभी कुछ तो मर चुका है, तुम में अब बचा ही क्या है, धीरे धीरे तुम ने सब कुछ समाप्त कर दिया है और अब तुम अगर कुछ हो तो केवल एक जिन्दा लाश—

बहुत कड़वी लग रही होगी मेरी बात, लेकिन शायद नहीं, क्योंकि अगर तुम्हें यह बात चुभे तो मेरी बात गलत हो जाएगी, यह तुम्हारे जीवन का लक्षण होगा, मुझे विश्वास ही नहीं कि तुम्हें कुछ चुभ भी सकता है ? काश कि तुम मेरी बात पर बुरा मान सकते ?

तुम एक क्षण के लिए भी यह सोचने के लिए तैयार होते कि तम आर्यपुत्र हो ! ऋषि पुत्र हो ! राम और कृष्ण के वीर वंशज हो.....तुम्हारे तन में अर्जुन, शिवा—प्रताप का रक्त प्रवाहित हो रहा है.....

क्या सोचा है कभी तुम ने, क्या कभी आया है तुम्हारे मन में, कभी ली है अंगड़ायी तुम्हारे मानस ने और अतीत के प्रहरों की स्मृति क्या कभी तुम्हें आयी है.....।

हे आर्य पुत्र !

क्या तुम ने कभी अपने को देखने का यत्न किया है। तुम्हारी भुजाएं अन्याय के विरुद्ध तलवार उठाने के लिए ललचायी हैं.....।

—प्रतिदिन तुम्हारे देश में हज़ारों गौएं कटती हैं ।

—माँ बहनों की इज्जत सरे आम लुटती है ।

देश की धरती पर लाखों भूखे सोते हैं , नंगे रहते हैं ।

ऋषि मुनियों के इस पावन देश में, गंगा, यमुना की पूत धरती पर पाप पुण्य बन गया है ।

बताओ किस वीर का मन मचला है सिर कटा कर भी गौ—मां, बहन की रक्षा के लिए !

—नकली भगवान जनता को बहका रहे हैं ।

पाखंडी इन्सान शैतान बन सभी को भटका रहे हैं ।

—धोखे बाज़ नेता रावण की राह पर बढ़ रहे हैं ।

और यह सब कुछ देख कर भी किसी का रक्त नहीं खौलता ?

—किसी की आँखों में लाली नहीं उभरती ।

—कोई सारे पापों के विरुद्ध युद्ध घोषणा नहीं करता—

तो बताओ—मैं क्यों न समझूं कि देश में आर्य पुत्र जीवित नहीं हैं

—भाषणों से देश नहीं बनते ।

—प्रस्तावों से क्रांति नहीं होती ।

—योजनाओं से संस्कृतियां नहीं उभरतीं—

बातें बनानी जितनी सरल हैं काम करना उतना ही कठिन । बातों के लिए सब तैयार हैं पर काम के लिए किसी के पास अवकाश नहीं ।

क्या कोई जीवित होने का प्रमाण देगा ?

१९७५ में कुछ थोड़ा सा समय शेष है। और मैं देख रही हूँ कि यह समय भी बीत जाएगा । वह ऐतिहासिक घड़ी बिना अर्घ्य के चली जाएगी जो इस धरती को नया प्रकाश, ज्योतिर्मय जीवन दे सकती है ?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नेता, भाषणों प्रस्तावों, योजनाओं से बहकाते रहेंगे और आप बहकते रहेंगे— किन्तु गुरुदेव दयानन्द का संदेश देश के कोने कोने में नहीं गूंज पाएगा ?

फिर किसे पुकारू·····
क्योंकि पुकार सुनने वाला कोई नहीं दीखता !

फिर भी हे काल ! हे आकाश ! हे वायु ! तुम दिशा दिशान्तरों में फैल जाओ और जाकर सब के कानों में चुपके से कह दो—

देव पुरुष दयानन्द के दिव्य स्वप्नों को पूर्ण करने के लिए क्या तुम जीवित हो·····प्रश्न करो सब से·····और यदि कोई उत्तर हाँ में दे सके तो—उस तक हमारा संदेश निमंत्रण पहुँचा देना— कि हे वीर !

चलो सिर पर कफन बांध
तुम्हें १९७५ बुला रहा है !

महापुरुष दयानन्द के दिव्य स्वप्नों में रंग भरने के लिये आज तुम्हारे रक्त की आवश्यकता है ? क्या तुम दे सकते हो ? जीवित चिता में जल-जल कर प्रकाश फैलाने वाले आर्य पुत्र यदि कहीं हों तो वे अपने जीवन का अर्घ्य चढ़ा १८७५ की ऐतिहासिक शताब्दी मनाने की तैयारी करें।

युद्ध के लिए, विजय के लिए धरती के हर आंगन में ओ३म् पताका फहराने के लिए यदि कोई जीवित हो तो वह हमारी पुकार सुने·····।

काश २—४—१०—२०—५० १०० वीर आर्य पुत्र आज देव दयानन्द का काम पूर्ण करने के लिए अपनी जीवन आहुति देकर जीवन का प्रमाण दे सकते—

प्रतीक्षा में सादर—

आप क्या करें ?

आपका मन यदि कुछ करने को तत्पर हो तो आप पूछेंगे कि हम क्या करें—

वैसे तो जब जीवन में कुछ करने की भावना जागेगी तो मार्ग भी आप को स्वयं ही मिल जाएगा फिर भी सूत्र रूप में कुछ सुझाव उपस्थित हैं—

१=जो व्यक्ति अपने ही क्षेत्र में कार्य करना चाहें वे अपने मस्तिष्क में रेखा चित्र बना लें कि १९७५ तक कितने भाग में आप काम कर सकते हैं।

२=जो भाग कार्य के लिए चुनें वहां अपने साथ २—४—१० व्यक्तियों का एक छोटा सा संगठन बनाएं। जहां आर्यसमाज है वहाँ उस के माध्यम से कार्य करें।

३=सब से पहले आवश्यक है कि जहां भी कोई पाखंड पूर्ण कार्यक्रम हो वहाँ पहुँचें और पाखड के आयोजकों को चुनौती दें। शास्त्रार्थ का आवाहन करें और अपने संभव साधनों द्वारा पाखंडों की वास्तविकता जनता में प्रगट करें।

४=अपने कार्य क्षेत्र में टोलियाँ बनाकर माँस, सिगरेट, शराब, और फैशन परस्ती के विरुद्ध प्रचार करें।

५=गुंडागर्दी को रोकने के लिए जनमत जागृत करें।

६=सड़क, चौराहों, चौपालों पर—५—५—१०—१० मिनट के भाषण दे जनता को उस के कर्त्तव्य से परिचित कराएं।

७=प्रातः सायं सामुहिक संध्या करने की प्रेरणा करें।

८=सत्यार्थप्रकाश ऋषि जीवन और प्रचार पोस्टरों द्वारा क्षेत्र को पूरी तरह ऋषि की विचारधारा से भर दें।

(शेष पृष्ठ १० पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संघर्ष और संग्राम
महानाश और निर्माण
तूफान और शांति
आज या
फिर कभी नहीं.....

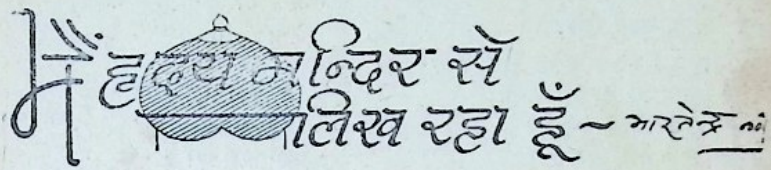

१८७५ में ऋषि दयानन्द ने भारत को बचाया था,
१९७५ में ऋषि के अनुयायी देश को बचाएं

इस्लाम का लहराता हुआ परचम, तलवारों के साथ खूँखार दरिन्दों के हाथों में बढ़ता हुआ भारत का सब कुछ बदलने के लिए तूफान बन कर फैलता अनाचार और क्रूर शासन धर्म, संस्कृति, दर्शन और ज्ञान के स्रोत 'वेद' को मिटाने हेतु कटिबद्ध रहा। आग धू धू कर जलती रही, बहुत कुछ जल गया, पर फिर भी धर्म सत्य और आत्मा को खंजर-व तेग मिटा न सके।

महानाश के क्रूर चक्र के बाद १७ वीं शताब्दी से अंग्रेजों का दमन चक्र कूट-नीति के साथ-साथ चला। अनेक दुरभि संधियाँ हुयीं, जहर को मीठी पर्त चढ़ा कर देने का षड़यन्त्र रचा गया। मैकाले की शिक्षा योजना, ब्रह्म समाज का पश्चिम प्रेम, मि० ह्यूम का राजनीति दर्शन मिलकर—एक ऐसा चक्र चलाना चाह रहे थे कि भारत ईसाइयत की विजय को सिर झुका कर स्वीकार कर लेता!

किन्तु जिस सत्य को मुस्लिम अत्याचार न मिटा सके थे, उस सत्य की रक्षा स्वयं प्रभु करते हैं। प्रभु की असीम अनुकंपा से भारत में एक ऐसा महापुरुष उदय हुआ, जिसने सारे षड़यन्त्रकारियों की दुरभिसंधियों पर वज्र प्रहार किया।

निराशा में आशा की किरण बनकर देव दयानन्द ने शंखनाद किया! सारे धर्म विरोधियों से चहुँमुखी लोहा लेते हुए वीर दयानन्द ने भारत के गौरव की रक्षा के लिए-जो मार्ग दर्शन दिया, उस से विरोधी कांप उठे! जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में ऋषि दयानन्द ने नयी दिशा दी। आत्म विश्वास जगाया, आत्म गौरव उभारा। अपने ह्रास के कारण भी बताए और उन्नति का मार्ग भी दिखाया!

—दयानन्द ने राम और कृष्ण की परंपरा को बचाया।
—ऋषि मुनियों का संदेश पुनः गुंजाया,
—यवनों को ललकारा,
—ईसाईयों को फटकारा,
—विदेशियों को चेतावनी दी,
—स्वदेश वासियों को संजीवनी दे नया जीवन दिया!

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—धर्म की रक्षा की,
—'वेद' का उद्धार किया,
—गौ के प्राण बचाए,
—निर्बल, निस्तेज, आर्य शक्ति को नया बल, तेज, मंत्र दिया ;
—इस्लाम का वेग रुक गया,
—ईसाइयत का जाल टूट गया,
—विदेशी चौंक गया,
—स्वदेशी जाग गया,

और वह लहर चली कि असुरों के दलों पर मानों कहर टूट पड़ा।
—निराश उठ खड़े हुए,
—सोया भाग्य जाग गया,
—हताश दौड़ने लगे,
—नयी चेतना उभरी,
—हुँकार गूंजने लगी।
—आर्य पुत्र, राम के धनुष की टंकार फिर से सुनाने लगे।
—गीता का गान सर्वत्र छा गया,
—'वेद' की ऋचाओं को संदेश वाहक मिल गए।

लहर बढ़ती गयी, षड़यन्त्र टूटते गए, अग्नि फैलती गयी—और १८७५ में स्थापित अग्निपुंज आर्य समाज ने १९४७ में ब्रिटिश दासता के बंधन राख कर दिए !

किन्तु दुर्भाग्य—
—षडयन्त्र फिर उभरे—
—विदेशी फिर संभले—
—ईसाइत, इस्लाम, और सांप्रदायिक तत्व तो थे ही—

नए मानवता के शत्रु,
—समाजवाद,
—राष्ट्रीयकरण,
—भौतिकवाद,
—भ्रष्टाचार,
—प्रांतीयता ढोंग और पाखंडों के नाम पर फिर सिर उठाने लगे। नए-नए रूपों में नए-नए ढंग से भारत की संस्कृति-धर्म-इतिहास को मिटाने के ढंग सोचे जाने लगे। जो—८०० वर्षों में इस्लाम न कर सका—३०० वर्षों में अंग्रेज न कर सका, वह अपनों ने, अपने शासन के २५ वर्षों में कर दिखाया।

—भारत का रूप बदलता गया,
—भारत का दर्शन बदल गया,
—चिन्तन बदल गया,
—आदर्श बदल गया।
—लगता है सभी कुछ बदल गया।
चारों ओर अंधेरा है,
निराशा है,
हाहाकार है,
महानाश है,
—देश पिस रहा है,
—धर्म मिट रहा है,
—सत्य टूट रहा है,
—न्याय लुट रहा है,

सब देख रहे हैं, पर आगे आकर शंखनाद करने को कोई तैयार नहीं ;
—आज ऋषि दयानन्द नहीं हैं।
—आज देव दयानन्द नहीं हैं।

फिर क्या होगा, प्रश्न गूंज रहा है।
गूंज रहा है..... .....
कौन है जो उत्तर देगा, ?
कौन है जो दयानन्द की तरह सिर उठा कर खड़ा होगा ?
कौन है जो समय से टकराएगा ?
कौन है जो विनाश के बवंडर से लड़ेगा ?

आज देव दयानन्द नहीं हैं पर क्या कोई दयानन्द का शिष्य भी जीवित है ?

क्या किसी को अभिमान है दयानन्द का उत्तराधिकारी होने का ?

५५ करोड़ की इस पावन धरती पर माँ का क्रन्दन सुन कर माँ के लिए जीवन देने वाले वीरों का क्या अकाल पड़ गया है ? —क्या पुण्य भूमि भारत वीर शून्य हो गयी है ?

कुछ समझ नहीं आता कि स्वार्थ के मोह ने क्या व्यामोह डाला है कि हम अपने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को भी भुला बैठे हैं.....
१९७५ आ रहा है—

आर्यसमाज का स्थापना शताब्दीवर्ष !

—१०० वर्ष बीत जाएंगे !
—जलसे मना कर हम समारोह मना लेंगे ।

किन्तु हमारा प्रश्न है कि इस अवसर पर क्या कोई ऋषि दयानन्द का उत्तराधिकारी जीवित होकर ऋषि की भांति शंखनाद कर सकेगा कि—**मैं जाग गया हूं, मैं अधर्म से लड़ूंगा, उसे मिटाऊंगा और भारत में धर्म की स्थापना करूंगा !**
—बहरे कान हमारी बात नहीं सुनेंगे ।
—समय के साथ बहने वाले दयानन्द की जय तो बोल सकते हैं पर दयानन्द का काम नहीं कर सकते ।

और आज नारे नहीं काम चाहिए । बलिदान चाहिए । विष के प्याले पीने वाले वीर चाहिएं । धर्म के लिए सिर कटाने वाले चाहिएं—मालाओं के लिए तरसने वाले नहीं ।
—तुम दुकान सजाते रहो,
—गद्दियां चमकाते रहो,
—पदों के लिए लड़ते रहो ।
—स्वार्थों में उलझे रहो.....
कोई तुम्हें रोक नहीं सकता । पर मेरा देश भारत मिट जाएगा । मेरा मन इस लिए क्रंदन कर रहा है कि मैं भारत से धर्म की अर्थी उठते देख रहा हूँ ।
—वीरों का रक्त ठण्डा पड़ चुका,
—स्वार्थ ने हमें कायर बना दिया,
—नारों ने हमें बहका दिया,
और आज हम देखते हुए भी देखते नहीं हैं । सुनते हुए भी सुनते नहीं हैं । धर्म पर संकट देख कर हमारा रक्त उबलता नहीं है । पर मैं इस स्थिति में भी निराश नहीं हूँ । सत्य के बल पर आर्य शक्ति को मैं पुकार रहा हूँ ।

—कोई दयानन्द का वीर सैनिक कहीं किसी कोने में भी जीवित हो तो मैं उसे पुकार रहा हूँ—
मेरा आवाहन है—

१९७५ आ रहा है ।
युद्ध घोषणा करो ।
पाखण्डों को मिटा दो,
अधर्म को समाप्त करो ।
भ्रष्टाचार मिटाओ ।
नास्तिकता—अन्धविश्वास गुरुडमों की अर्थी जलाओ ।
दयानन्द के सैनिको !
उठो युद्ध करो !!

—देश व्यापी अनैतिकता के विरुद्ध,
—चारों ओर छाए पाप के विरुद्ध
—समाजवाद, राष्ट्रीयकरण आदि जहरीले विदेशी वादों के विरुद्ध युद्ध करो ।
अज्ञान के,
अन्याय के,
अभाव के विरुद्ध ।
इन तीनों को मिटाने का व्रत लो ।
मनुष्य को मनुष्य बनाने का व्रत लो ।
शैतान को देवता बनाने का व्रत लो ।
अधर्म के नाश और धर्म की रक्षा का संकल्प लो ।
एक बार जाग जाओ ।

१८७५ में गुरुदेव दयानन्द ने धर्म को बचाया था, १९७५ में हम दयानन्द के अनुयायी देश को बचाने का निश्चय करें ।

सत्यार्थ प्रकाश—'वेद' और ऋषि जीवन भारत के घर घर में पहुँचाओ !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आवश्यकताएं कम करो, उत्पादन बढ़ाओ

राष्ट्र हित की दृष्टि से आज सर्वप्रथम आवश्यक है कि प्रत्येक नागरिक अपनी आवश्यकताएं कम करे। विलासिता पूर्ण, चकाचौंध मय जीवन की ओर बढ़ते हुए आकर्षण ने हमें एक सर्वनाशकारी मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया है।

पिछले २५ वर्षों में हम में काम न करने की, और अधिक से अधिक मौज उड़ाने की प्रवृत्ति उभरी है। कारखाना हो या उत्पादन केन्द्र, कार्यालय हो या संस्थान वहां काम कम से कम करना स्वभाव का एक आवश्यक अंग बन गया है।

वस्तुतः धर्म भावना समाप्त कर देने पर **'खाओ पिओ मौज करो''** का दर्शन उभरता है जिस का घातक परिणाम प्रत्यक्ष रूप से प्रगट है। इस दिशा में गंभीरता से सोचने के लिए कोई भी तो तैयार नहीं।

हमारी दृष्टि में राष्ट्र के सभी नागरिक यदि अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन ले आएं और **अधिक से अधिक काम और कम से कम व्यय** के कार्यक्रम को जीवन में ढालें तो उलझी समस्याएं आसानी से सुलझ सकती हैं।

धार्मिक संस्थाओं और संगठनों को इस दिशा में पहल करतेहुए सभी का मार्ग दर्शन करना चाहिए।

कथनी और करनी

व्यक्ति हों या संगठन, यदि उनकी कथनी और करनी में अंतर आ जाता है तो उनका प्रभाव स्वतः समाप्त हो जाता है। जन मानस उपदेश के स्थान पर आचरण देखता है।

हम सभी अपने को टटोलें कि जो कुछ हम कहते हैं, उसके अनुसार आचरण भी करते हैं या नहीं? यदि नहीं तो हम दूसरों से क्या आशा कर सकते हैं। हमारा चिन्तन बता रहा है कि हमारी असफलताओं का मुख्य कारण अपने आचरण ही होते हैं।

यदि हमारी घोषणाएं सत्य हों, हमारे कार्यक्रम सत्य पर आधारित हों तो कोई कारण नहीं कि धरती के लोग हमारे उपदेश को न मानें।

सोच समझ कर बोलो,
जो कहो, वह पूरा करो।
सफलता अवश्य मिलेगी।

: एक वर्ष बीत गया :

२ मई १९७३ को राष्ट्र के रक्षा मन्त्री माननीय जगजीवन राम जी ने वेद भाष्य के प्रथम खंड का विमोचन किया था! इसी दिन वेद भाष्य पूर्ण न होने तक हमने अन्न छोड़ने का व्रत लिया था। और अब आ गई २ मई १९७४। पूरा एक वर्ष बीत गया।

एक वर्ष अर्थात् ३६५ दिन बीत गए और समस्या उलझती गयी। जो सोचा था, सब कुछ विपरीत होता गया। कागज के मूल्य दुगने से भी अधिक हो गए। उलझनें बढ़ती गयीं और बढ़ती जा रही हैं।

अन्न छोड़ने से मेरे स्वास्थ्य को जो हानि पहुंची है वह तो जीवन में पूर्ण होनी कठिन है। किन्तु फिर भी जो मानसिक आघात वेद प्रचार के पवित्र यज्ञ की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पूर्ति के लिए हमें सहने पड़े हैं उन्होंने हमें झकझोर दिया है। कभी कभी तो यह भी सोचना पड़ जाता है कि कहीं सचमुच में वेद घर-घर में पहुंचाना कोई अपराध तो नहीं था ?

कम से कम ८ हजार ऐसे व्यक्तियों के घरों में 'वेद' पहुँचा जिन्होंने कभी 'वेद' के दर्शन नहीं किए थे। 'वेद' का नाम देशान्तरों में गूँजा। अमेरिका से एक मुसलमान बंधु ने बड़ी श्रद्धा से वेद मंगाए। देश के कोने कोने में घर-घर में वेद पहुँचे। हमें गौरव है, पर वे जो 'वेद' का प्रचार जीवन का लक्ष्य घोषित करते हैं 'वेद' के प्रचार से प्रसन्न नहीं हुए। क्यों नहीं हुए, क्या कहें और क्या न कहें— कुछ समझ नहीं आता। हमने कभी अपने पाठकों से कुछ छिपाया नहीं, अपना हृदय सदा मुक्त भाव से उनके समक्ष रख दिया है। यही हमारा बल है और शायद यही निर्बलता। सब कुछ विपरीत होने पर भी हम निराश नहीं हैं। ऋग्वेद ६ मंडल, यजुर्वेद, सामवेद, प्रकाशित होकर ८-८ हजार वितरित किए जा चुके हैं। अथर्ववेद का प्रकाशन ७ वें कांड तक का हो चुका है। १३ कांड और शीघ्र से शीघ्र छप जाएं यह हमारी इच्छा है।

किन्तु हमारी इच्छा में अभी शायद वह पवित्रता नहीं आयी कि प्रभु भक्तों का हृदय उसे पूर्ण करने के लिए मचल पड़े।

जन—ज्ञान के मान्य सदस्यों में ही सैकड़ों ऐसे व्यक्ति होंगे जो चाहें तो अकेले कार्यपूर्ण कर सकें। ईंटों के वेद मंदिर बनाने के लिए धन देने वालों की तो कमी नहीं। पर अपने धर्म ग्रन्थ परमात्मा की अमर वाणी 'वेद' को १२००० घरों में पहुँचाने का महत्व समझने वाले व्यक्तियों का अभाव हम अनुभव कर रहे हैं।

कार्य तो पूरा होगा ही, शताब्दी से पहले ही पूरा होगा, पर इसके लिए लगता है हमें अभी और अधिक बलिदान देना होगा। हमारा शरीर भी अब साथ नहीं दे रहा, फिर भी हमें अपनी राह पर विश्वास है। तथा मन हमारे साथ है और प्रभु भले ही आज हमारी परीक्षा ले रहे हों किन्तु समय आएगा जब हमारी साधना से प्रभु का आशीर्वाद और प्रभु भक्तों का स्नेह हम पा सकेंगे।

हमारे जीवन की साधना है "वेद प्रचार"। ऋषि दयानन्द के स्वप्नों की पूर्ति ! हमारे मस्तिष्क में जो रेखा चित्र है गुरुदेव के कार्य का, उसमें रंग भरने के लिए हम से जो भी बन पड़ेगा, करेंगे।

वेद, सत्यार्थ प्रकाश और ऋषि जीवन को भू मंडल पर फैलाना जो उचित समझते हों, वे हमारा साथ दें। जो नारों में नहीं काम में विश्वास रखते हों वे हमारे साथ आएं, हमारा निश्चय है कि हम धरती से अधर्म की समाप्ति और धर्म की रक्षा के लिए जो कुछ भी संभव बन पड़ेगा करेंगे।

आप सोचिए कि 'वेद' प्रकाशन के इस महायज्ञ में आप क्या सहयोग दे सकते हैं ?

व्यक्ति चाहिएं

राजधानी में वेद मंदिर के लिए ६००० गज भूमि प्राप्त हो गयी है। लगभग ३००-४०० पेड़ भी लगवा दिए हैं। नल और एक कमरा व यज्ञ वेदी का चबूतरा भी खड़ा हो गया है।

अब आवश्यकता है कुछ ऐसे व्यक्तियों की, कि जो अपना जीवन ऋषि विचार-प्रचार हेतु अर्पित कर इस वेद मंदिर को संभाल सकें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमें ऐसे व्यक्तियों की भी खोज है जो हमारे बाद दयानन्द संस्थान को भी चला सकें। अपने जीवन में ही सब कुछ योग्य व्यक्तियों को सौंप निश्चिन्त होना चाहता हूँ। ताकि हमारे बादभी यह सारा कार्य इसी भांति चलता रहे।

१९७५ की शताब्दी से पूर्व सारे देश को जगाना है। वेदों का डंका आलम में बजाना है। वेद भाष्य का काम पूरा करना है और ऋषि दयानन्द की जय का स्वर सर्वत्र गुंजाना है। व्यक्ति चाहिएं धन चाहिए, आशीर्वाद चाहिए।

सन्ध्या हवन एण्ड कम्पनी

बहुत से तथा कथित प्रगति शील नेता अपने भाषणों में आर्यसमाज का **संध्या हवन एंड कम्पनी** कह कर मजाक उड़ाते हैं। उन की दृष्टि में यह सब कुछ सार नहीं रखता।

किन्तु हमारी दृष्टि में आर्यसमाज वास्तव में यदि संध्या हवन एण्ड कम्पनी बन जाता तो आज संसार की समस्याएं ही सुलझ जातीं।

यदि प्रत्येक आर्य सदस्य प्रतिदिन संध्या करे, दोनों समय यज्ञ करे और अपना जीवन आदर्श यज्ञमय बना लें तो फिर धरती को बदलने में कितना समय लगेगा?

हमारे मन की व्यथा तो यही है कि आर्य पुरुषों ने संध्या छोड़ी, हवन-यज्ञ छोड़ा, स्वाध्याय छोड़ा केवल नारे-आंदोलन-प्रदर्शन की भाषा स्मरण रही, जिसका परिणाम है कि हम अपना स्वरूप ही विस्मृत कर बैठे हैं।

संध्या हवन आर्य समाज की आधार शिला हैं। प्रभु से मिलने का मार्ग दर्शन जिसे नहीं मिला वह व्यक्ति नेता बनकर छलना फैला सकता है, देव दयानन्द के दिव्य स्वप्नों को पूर्ण नहीं कर सकता।

प्रभु पुत्रो! अपने जीवन में कुछ समय उस पिता से मिलने के लिए निकालो, जिसने तुम्हें सब कुछ दिया। जीवन के हर क्षण में यदि उसके साथ नहीं रह सकते तो कुछ ऐसा तो करो कि चौबीस घंटे में १ घंटा उस के पास बैठ सको।

प्रत्येक आर्य परिवार में प्रतिदिन संध्या और यज्ञ होना ही चाहिए। प्रभु वह दिन शीघ्र लाएं, जब आर्य समाज वस्तुतः संध्या हवन पर अपनी आधार शिला रखे।

—भारतेन्द्र नाथ

[चौथे पृष्ठ से आगे]

९=विशेष पर्वों पर सामुहिक यज्ञ आयोजन करें

१०=अश्लील चित्र, उच्छृङ्खलता और भ्रष्टाचार, रिश्वत आदि के विरुद्ध वातावरण बनाओ।

११=पिछले १०० वर्षों में आर्यसमाज के कार्यों को जनता को बताएं और सभी को यह विश्वास दिलाएं कि वर्तमान की उलझी समस्याओं का हल केवल आर्य-समाज ही कर सकता है।

यह कुछ संकेत हैं। काम करने वाले स्वयं राह निकाल लेते हैं। जो व्यक्ति पूर्ण जीवन आर्य धर्म के अर्पित कर सकें वे हम से संपर्क करें।

युग मांग रहा बलिदान,
दोगे कब प्रतिदान,
उज्ज्वल भविष्य के गान,
कब गूंजें जयी वितान,
आओ, हे वीर ललाम,
साधो, सब कार्य महान्,

—राकेशरानी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—बनारसी सिंह

समाजवाद और भारत

क्या समाजवाद अमृत है या विष ? विष भी ऐसा कि कोई इलाज नहीं। क्या दिया इसने, क्या किया इसने, गंभीरता से पढ़ डालिए—लेख !

भारतवर्ष को स्वतन्त्र हुए २६ वर्ष का कालखंड व्यतीत हो चका है। इस अवधि में राजनीतिक मंचों से जो शब्द सर्वाधिक जोर शोर से गूंजा है वह है समाजवाद ! सत्तारूढ़ दल से लेकर अधिकांश विपक्षी दलों तक सभी के मंचों का यही सर्वाधिक व्यापक शब्द रहा है तो उसकी किस्में भी कई हो चुकी हैं। उसी के अनुरूप समाजवादी भी अनेक तरह के हैं। कोई लोकतांत्रिक समाजवादी है तो कोई क्राँतिकारी ; कोई लोहिया समाजवादी बना तो कोई जयप्रकाशवादी समाजवादी। इतना ही नहीं अपितु विशुद्ध समाजवादी होने के दावेदारों से लेकर वैदिक समाजवादी तक आज इस देवभूमि में जन कल्याण हेतु गला फाड़ने में एक दूसरे को पछाड़ने पर तुले हैं। किन्तु सार रूप में कहा जाए तो यही कहा जा सकता है कि इन अलग अलग लेबिलों और रंगों के बावजूद सब समाजवादी ही इस बात पर एक मत हैं कि समाजवाद ऐसी व्यवस्था है कि जिसमें उत्पादन के साधनों पर व्यक्तिगत स्वामित्व का प्रश्न ही नहीं उठता। अथवा यह भी कहा जा सकता है कि इसका तात्पर्य है उत्पादन के साधनों का राष्ट्रीयकरण।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि समाजवादी व्यवस्था में राष्ट्रीयकरण एक अनिवार्य प्रक्रिया है। इसके साथ ही इस तथ्य को भी विस्मृत नहीं किया जा सकता है है कि समाजवादी प्रशासन पद्धति के अनुगामियों के लिए दो ही देश प्रेरणा के स्रोत हैं, वे हैं सोवियत रूस और चीन।

भारत के सत्तारूढ़ दल और उसके कर्णधारों ने भी रूस की ही ओर अपनी प्रशासनिक एवम् विकास योजनाओं के निर्माण हेतु निहारा। रूसी ढंग पर ही भारत की जनता एवम् कल्याण का उद्देश्य घोषित करते हुए पंचवर्षीय योजनाओं का क्रम आरम्भ हुआ और इन योजनाओं के प्रारूप व ताने बाने भी बने, समाजवादी देशोंका

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ही अनुकरण इस दृष्टि से भी एक प्रक्रिया बना। वर्तमान स्थिति का विश्लेषण इसी संदर्भ में प्रस्तुत है।

राष्ट्र के लिए आवश्यक तीन धन—

वस्तुतः किसी भी राष्ट्र को निर्वाह के लिए तीन प्रकार का धन अपेक्षित है। इस्पात, लोहा, कोयला, पैट्रोल मशीनी यंत्र, सीमेण्ट आदि भारी उद्योगों से मिलता है। तांबे, पीतल के बर्तन, कागज, लकड़ी का सामान, औषधियां, लालटेन, मिट्टी का तेल एवम् लेखक साहित्य इत्यादि धन मध्यम उद्योग धंधों से मिलता है तो गेहूँ, चावल, ज्वार, बाजरा, मक्का आदि धन खेती से प्राप्त होता है।

इन धनों पर जब विचार किया जाएगा तो यह सुस्पष्ट हो जएगा कि मध्यम उद्योग धंधों व कृषि आदि से उत्पन्न होने वाला धन जीवन रक्षक धन है, भोग धन है। वस्तुतः समाज का दैनिक जीवन इसी पर पूर्णतः अवलम्बित है। यह भी स्पष्ट है कि उत्पन्न होते ही इस धन का उपयोग होता है। अनाज, दूध, सब्जी इत्यादि उत्पन्न होते ही मानव की क्षुधा के शमन का साधन बनते हैं। भारी उद्योगों से प्राप्त होने वाले धन का ऐसा उपयोग नहीं हो सकता। इस्पात, रसायन, कोयला इत्यादि धन भी मानव के लिए उतना ही उपयोगी है किन्तु निर्मित होने के पश्चात् प्रत्यक्ष जीवन के लिए उसका उपयोग तत्काल नहीं हो पाता। जनता की पहली आवश्यकता अनाज और वस्त्र की है। दूसरी आवश्यकता है, बर्तन, काँच तथा चर्म के सामान की। इनके सरलता से निर्माण हेतु समाज के पास भारी धन होना आवश्यक है।

निर्धन राष्ट्र क्या करें—

सामान्य रूप से विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि पिछड़े हुए निर्धन राष्ट्र ने आरम्भ से ही यदि बड़े उद्योगों में अपनी सब पूंजी लगाई तो वह जनता को अन्न, वस्त्र, बर्तन और आवास नहीं दे पाएगा, समाज के समक्ष भूख की समस्या प्रबल होगी। बड़े उद्योगों के लिए प्रचण्ड पूंजी आवश्यक है। समाजवादी व्यवस्था में ऐसे उद्योगों पर जोर दिया जाता है। पूंजी, विपुल पूंजी प्राप्ति के लिए आवश्यक है मनमानी करना और फिर उसके फलस्वरूप मंहगाई बढ़ना भी स्वाभाविक ही है। जब अत्यधिक कर भार के उपरान्त भी बड़े उद्योगों के लिए पर्याप्त राशि उपलब्ध नहीं हो पाती तो सरकार मुद्रा अधिक प्रमाण में जारी करती है। उसे प्रमाण से अधिक नोट भी मुद्रित करने पड़ते हैं। वह पैसा बाजार में आता है तो मंहगाई को बढ़ावा देते हैं। आज देश में विद्यमान कमरतोड़ मंहगाई इसी सत्य और तथ्य को उजागर कर रही है और यह समाजवादी व्यवस्था के अनुसार बड़े उद्योगों को बढ़ावा देने की प्रवृत्ति का ही परिणाम है।

औद्योगिक प्रगति के लिए पूंजी जुटाने के क्रम में हमारे नेता आए दिन लोगों से त्याग करने का आह्वान भी करते रहे हैं। यदि जनता के लिए अन्न वस्त्र की उपलब्धि भी इस तथाकथित विकास के क्रम में दुर्लभ हो जाए तो ऐसी आर्थिक प्रगति का कोई तात्पर्य नहीं रह जाता। वस्तुतः अविकसित राष्ट्रों द्वारा भारी बड़े उद्योगों को प्रमुखता देने से जनता को अन्न वस्त्र यथेष्ट मात्रा में सुलभ कराना संभव नहीं रह जाता! भारत के नेताओं ने कृषि के विकास को प्रमुखता न दे भारी उद्योगों को प्रमुखता प्रदान कर अपनी समाजवादी सनक का ही परिचय दिया है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक स्वाभाविक प्रश्न—

अब यह प्रश्न उपस्थित होना स्वाभाविक है कि यदि भारी उद्योगों पर बल देने से जनता की अन्न वस्त्र संबन्धी मूल आवश्यकताओं की पूर्ति में अड़चन पड़ती है तो फिर रूस और चीन अपनी विकास योजनाओं में कैसे सफल हो पाए ? इस प्रश्न का सीधा सा उत्तर है कि इन देशों में बन्दूक की नोक पर जन साधारण से काम लेकर योजनाओं को यशस्वी बनाया गया। इतिहास साक्षी है कि स्टालिन ने अपने अन्तिम काल में नजर बन्दी शिविर खोलकर सहस्रों रूसी नागरिकों को उसमें धकेला और कहा जाता है कि मुट्ठी मुट्ठी अन्न पर लोगों से वहाँ १८-१८ घंटे तक काम लिया गया। चीन की कहानी भी इससे कुछ अलग नहीं किन्तु भारत और इन दोनों की स्थिति में एक मौलिक अन्तर है। भारत में जहां लोकतन्त्र है वहाँ दलीय तानाशाही है। अतएव भारत में यमदण्ड से जनता से काम लेना सम्भव नहीं।

एक विवेचन—

प्रो० महालोनवीस द्वारा प्रस्तुत अध्ययन के अनुसार बड़े उद्योग में यदि दस लाख रुपए की पूँजी लगे तो उसमें १९ लाख रुपए का धनोत्पादन होगा तथा ५०० व्यक्तियों को रोजगार मिलेगा। और यदि मध्यम उद्योग में इतनी ही पूँजी का निवेश हो तो उससे ३३ लाख का धन प्राप्त होगा तथा १२०० व्यक्ति काम पर लगेंगे एवम् यदि कृषि में इतना ही धन लगाया जाएगा तो उससे ५६ लाख की प्राप्ति होगी और ४ हजार व्यक्ति काम पर लगेंगे।

अन्नाभाव व बढ़ती बेकारी—

वस्तुतः समाजवाद के दीवानेपन में भारी उद्योगों पर आवश्यकता से अधिक बल दिए जाने के परिणाम स्वरूप एक के बाद एक पंचवर्षीय योजना के समापन पर बेकारी में ही वृद्धि हुई। हर योजना में बेकारी उन्मूलन का लक्ष्य घोषित किया गया किन्तु बढ़े केवल मूल्य और उत्पादन की वृद्धि के सुनहरे स्वप्न पूर्ण न हुए। अन्न का भी अभाव देश की जनता ने अनुभव किया। २८ अक्तूबर १९६२ को तत्कालीन केन्द्रीय योजना मन्त्री श्री गुलजारी लाल नंदा ने कहा था कि "मध्यम उद्योगों पर बल देकर हम उत्पादन सहज ही बढ़ा सकेंगे किन्तु हमें वैसा नहीं करना है। दूसरे देशों के उत्पादन से हमारी तुलना करना निरर्थक है। मूलभूत बड़े उद्योगों पर अधिक बल देने से हमारा उत्पादन कम है, यह सच है किन्तु अंतिम यश की दृष्टि से यही नीति सही है।"

आज उपरोक्त घोषणा को हुए भी १२ वर्ष का कालखंड बीत रहा है। श्री नंदा अब मन्त्री भी नहीं रहे किन्तु उनकी सुन्दर कल्पना कहाँ तक सार्थक सिद्ध हुई है, यह आज की स्थिति से स्पष्ट है।

योजनाओं के क्रियान्वयन में योजना कार्यक्रम को क्रियान्वित करने वाले अधिकारियों के भ्रष्टाचार की कहानी भी आज अनजानी नहीं है। अतएव यह स्पष्ट है कि समाजवादी पद्धति का अंधानुकरण भारत के लिए मंहगा सौदा ही सिद्ध हुआ। विगत ५ वर्षों से ही मंहगाई की सुरसाने जो विकराल रूप धारण किया है, उसके कारण तो आज शासकों में भी चिन्ता दिखाई दे रही है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उचित पग क्या ?

वास्तव में भारतीय स्थितियों के संदर्भ में यही उपयुक्त मार्ग था कि हम जड़ धन विदेशों से लेते और कृषि धन स्वदेश में उपजाते। यदि ऐसा होता तो स्वतन्त्रता की इस २६ वर्ष की अवधि में हम अनाज की दृष्टि से आत्म निर्भर हो जाते तथा जड़ धन के रूप में लिया गया ऋण भी चुका पाते। जापान और इस्राईल ने इसी नीति का अवलम्बन कर विश्व में अपनी महिमा बढ़ाई है यदि भारत भी कृषि उत्पादन को प्रमुखता देता तो आज जिस भयंकर बेरोजगारी का तांडव दिन प्रतिदिन हो रहा है वह दृष्टि गोचर न होता और देश में लाखों शिक्षित बेरोजगारों की फौज़ खड़ी न होती किन्तु समाजवादी मृग मरीचिका में पड़ने से ही आज भारत की तस्वीर विश्व के मानचित्र पर एक धन शून्य राष्ट्र के रूप में उभरी है। हां समाजवादी प्रणाली का भारत की स्थितियों की उपेक्षा करते हुए अनुगमन करने का परिणाम यह अवश्य ही हुआ है कि भारत में आर्थिक असमानता बढ़ी है तथा वर्ग संघर्ष के प्रणेताओं को अपनी गोटियां फिट करने की स्वर्णिय संधि प्राप्त हुई है ।

राष्ट्रीयकरण-कहाँ तक साधक—

समाजवाद के मोहजाल से ग्रस्त भारत के सत्ताधीशों ने राष्ट्रीयकरण को भी समय के अनुरूप कोई कार्यक्रम मात्र न समझ कर एक ईमान ही बना लिया है। प्रगति शीलता के ठेकेदार आए दिन विभिन्न उद्योगों के राष्ट्रीयकरण पर बल देते हैं। राष्ट्रीयकरण के मोहक नारे देश में इतने जोरों से गूंजे हैं कि इनका विरोध करने वाले तत्काल ही प्रतिक्रिया वादी घोषित कर दिए जाते हैं। राष्ट्रीयकरण के नाम पर १९७१ में बैंकों को सरकार ने अपने हाथ में लिया तो गत वर्ष गल्ले के व्यापार का भी सरकारीकरण या राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। किन्तु उसका परिणाम क्या हुआ आज यह खुली हुई पुस्तक के समान सुस्पष्ट है।

बैंकों में राष्ट्रीयकरण के उपरांत जो दुरवस्था हुई है उससे तो आज के प्रगति शील कहे जाने वाले नेता भी दुखी हुए बिना नहीं रहे। पिछले ही दिनों कांग्रेसी नेता श्री कृष्णकांत और कम्युनिस्ट नेता श्री भूपेश गुप्त तक को यह कहना पड़ा कि सरकारी कर्मचारी और बैंक कर्मचारी अपनी असली ड्यूटी टाइम में गपशप करते रहते हैं तथा ओवर टाइम कार्य करके भत्ता वसूल करते हैं। इस प्रकार बैंक राष्ट्रीयकरण के उपरान्त उनकी कार्यदक्षता में आई कमी सुस्पष्ट है । इसकी स्वीकारोक्ति आज सत्तारूढ़ दल के नेताओं से लेकर स्वयं वित्त मन्त्री तक भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कर रहे हैं।

कोयला खानों के सरकारीकरण का परिणाम—

राष्ट्रीयकरण के मोह जाल से ग्रस्त सरकार ने कोयला खानों के सरकारीकरण का भी पग उठाया। किन्तु उसका परिणाम भी आर्थिक ढांचे पर प्रबल आघात और खानों के संचालन में भारी कुप्रबन्ध तथा भ्रष्टाचार के रूप में ही सामने आया है।

देश के प्रायः अधिकांश भागों में आज कोयला उपलब्धि की स्थिति नितांत बिगड़ जाने के कारण विद्युत उत्पादन अपूर्ति और उद्योग धंधे भी बुरी तरह प्रभावित हुए हैं, बिजली की कमी के कारण पिछले दिनों अनेक औद्योगिक इकाईयों में काम

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ठप्प चल रहा है तो नलकूपों के लिए भी विद्युत की उपलब्धि कराना कठिन होने से कृषि उत्पादन पर भी विपरीत प्रभाव पड़ा है।

गेहूं थोक व्यापार का सरकारीकरण के परिणाम—

गत वर्ष बड़े धूम धड़ाके के साथ गेहूँ के थोक व्यापार का सरकारीकरण या अधिग्रहण किया गया था। अन्ध सिद्धान्तों और गलत मान्यताओं के परिणाम स्वरूप केन्द्रीय सरकार ने गेहूँ का थोक क्रय-विक्रय जनसाधारण के लिए प्रतिबन्धित कर उस पर सरकारी एकाधिकार स्थापित कर दिया था।

इस सरकारी पग के फलस्वरूप देश के अधिकांश भागों में खाद्यान्नों की अति मूल्य वृद्धि और भारी अभाव हो गया तथा जनता आर्तनाद कर उठी। जिस समय गेहूँ के थोक व्यापार का सरकारीकरण किया गया था, उसी समय अनेकों प्रबुद्ध जनों ने सरकार को ऐसा पग न उठाने की चेतावनी भी दी थी किन्तु तथाकथित समाजवाद के नाम पर हो रहे हल्ले गुल्ले में चेतावनी के ये स्वर विलीन हो गए। परन्तु यह तो सौभाग्य ही कहा जाएगा कि चार दिन तक विचार विमर्श के उपरान्त २८ मार्च १९७४ से (एक वर्ष के बाद) गेहूँ के थोक व्यापार के सरकारी एकाधिकार को समाप्त करने का निर्णय ले लिया गया। राष्ट्रीयकरण नीति की यह करारी हार है।

उसका आरम्भिक परिणाम यह हुआ कि देश के अधिकांश भागों से प्राप्त हुई प्रारम्भिक सूचनाओं के अनुसार गेहूँ के मूल्य में कुछ गिरावट आई है और खाद्यान्नों के अभाव से वायु मण्डल में भी पर्याप्त सुधार हुआ है।

नीति कैसी हो—

स्वदेश के समक्ष विद्यमान स्थितियों के निदान हेतु सत्ताधीशों को नारों की दासता से सर्वथा मुक्त होकर भारत में धन प्रधान नहीं अपितु श्रम प्रधान योजनाएं बनानी चाहिएं तथा भारी उद्योगों के स्थान पर लघु उद्योगों को बढ़ावा देना चाहिए। समाजवाद का उद्घोष आज राष्ट्र की समस्याओं का निदान नहीं अपितु राष्ट्रवाद की भावनाओं का जन-जन में प्रसारण ही युग की मांग है।

भारत भूमि को वास्तविक अर्थों में सुजलाम सुफलाम वरदाम् रूप प्रदान करने के लिए नारों की गुलामी नहीं अपितु अतीत की भूलों से शिक्षा ग्रहण कर स्वदेश की अभिवृद्धि और समुज्ज्वल भविष्य के लिए विदेशों के अनुभवों से भरपूर लाभ तो उठाया जाए किन्तु अपना सब कुछहेय और गैरों का सब कुछ श्रेय एवम् 'अन्यों का जो कुछ जैसा भी आंख मूंद कर लें अभिनंदन' की प्रवृत्ति से देश के शासकों को मुक्त होना होगा। भारत का कल्याण न समाजवाद में है और न ही पूंजीवाद में अपितु इसकी समस्याओं का निदान राष्ट्रवाद की उस पावन भावना के उद्भव में निहित है, जिसका उद्घोष वेद ने इन शब्दों किया है:—

सगच्छध्वम् सवंद्ध्वम वेवो मनांसि जानताम्।
देवा भागम् यथा पूर्वे संजानाना उपासते॥

वैदिक अर्थ शास्त्र क्या है ?
इस का परिचय आगामी अंक में पढ़ें—मंगाएं और बांटे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

३५०) सैकड़ा : सजिल्द सत्यार्थ प्रकाश मंगाइए ।

जन-ज्ञान के प्रत्येक
सदस्य के परिवार में तो

वेद भाष्य होना ही चाहिए

१ मई १९७४ से वेद भाष्य का
मूल्य १२४ रु० है किन्तु
जन-ज्ञान के मान्य सदस्य

केवल १०१ रु० भेजकर
वेद भाष्य मंगा सकते हैं ।

घर-घर में वेद पहुँचा कर
आर्य समाज स्थापना शताब्दी मनाइये
आज ही सदस्य बनिए

एक सदस्य केवल एक ही वेद भाष्य
मंगा सकते हैं—
अपना ग्राहक नं० अवश्य लिखें

सम्पादक जन-ज्ञान नई दिल्ली-५

१००) सैकड़ा ऋषि जीवन मंगाएं

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सुप्रसिद्ध विद्वान का पत्र

मान्य श्री भारतेन्द्र नाथ जी,

सादर सस्नेह नमस्ते ।

मैंने आपका लिखा हुआ अति संक्षिप्त किन्तु व्यञ्जना प्रधान "आत्म निवेदन" जन-ज्ञान में पढ़ा जो आपने अपने पुनीत जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में लिखा । मेरा आपसे केवल साहित्यक परिचय हुआ था, आपके व्यक्तित्व का दर्शन मुझे उपलब्ध न हो सका था । भगवान् जानें यह सुअवसर कब देगा । कुछ झलक इसमें मिली ।

मैं सदा सोचता था कि वेदों के प्रति यह अनन्य निष्ठा एवं गुरुवर दयानन्द के चरणों में यह ध्रुव अनुराग जो मुझे आपके लेखों या सभारम्भों में ध्वनित होता है, उसका कोई न कोई मूल आधार अवश्य अपेक्षित है, आप प्रतिभाशाली आर्ष ज्ञान के पुञ्ज, एवं अदम्यतितिक्षा-सम्पन्न हैं । शत्रुओं के प्रहारों को आप शैल-शिलोच्चय के समान सहन कर रहे हैं । इन प्रश्नों का उत्तर आपके इस लघु काय आत्म परिचय में मुझे मिल गया । यदि आप इसे सिद्धान्त विरुद्ध कह कर ही अवहेलना न कर दें तो मैं यह कहना ही चाहूँगा । आप ब्राह्मण कुलोत्पन्न हैं और आपके श्रद्धेय पिता पं० गया प्रसाद शुक्ल हैं । मुझे इससे गर्व होता है । हम गुण कर्म स्वभाव से वर्ण व्यवस्था को मानते हैं, यही शास्त्रों और हमारे ऋषि का आदेश है तथापि वंश का गौरव दृष्टि-विचलित नहीं किया जा सकता । मैं तो "पुनन्तु मां ब्राह्मण-पाद-रेणवः" का तथ्य मानता हूँ । श्रुति सरस्वती का दिगन्त घोष हमने ही करना होगा । "को वेदानुद्धरिष्यति" यह चिन्ताग्नि हमें दग्ध कर रही है । यद्यपि आर्यसमाज ऋषि के स्वप्नों की अवहेलना करके राजनैतिक नेताओं के हाथों में आ गया है तथापि चिन्ता नहीं ।

"यावत् भारतवर्षं स्यात् यावद् विन्ध्य हिमाचलौ ।
यावद् गंगा च गोदा च वेदास्तावद समुज्वला ।।"

इसलिए आप इस असिधारा-व्रत का निर्वाह करते जावें । विजय आपकी होगी—भगवत् गीता में स्पष्ट कहा है:—

"नेहाभि क्रयनाशोऽस्ति प्रत्यवायो न विद्यते ।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् ।।"

ये कुछ शब्द मैंने लिखे हैं । आपकी प्रशंसा में नहीं । यह तो श्रुति माता के उपासकों को वरदान है । बाधाएँ उनके लिए अभिशाप नहीं । जो कुछ आपने अनुभूति-प्रधान लिखा है—मैं इसी पथ का नगण्य पथिक हूँ । इस महान् अभिक्रम में मुझे आप सहायक समझें । जो मेरे योग्य कर्त्तव्य लिखें । मेरी परम पिता के चरणों में प्रार्थना है कि वे आपको ध्रुव धैर्य्य और दीर्घायु देवें जिससे आप वेदों के आलोक को दिग्-दिगन्त में विस्तारित कर सकें ।

— मंगलाकांक्षी

फरीदाबाद डा० परमानन्द एम० ए०, एम० ओ० एल०, पी० एच० डी०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भू मंडल में वैदिक ज्ञान फैलाने के लिए—सहयोग दीजिए

English – Jan-Gyan के

कम से कम दो नए सदस्य बनाकर २०) भिजवाएं

और ४) की बचत करें

हिन्दी जन-ज्ञान के ५ नए सदस्य बनाकर

उनका शुल्क केवल ५०) भेजें

इस अंक के साथ जन-ज्ञान अपना छठा वर्ष समाप्त कर ७वें वर्ष में प्रविष्ट हो रहा है।

वर्षगांठ के इस अवसर पर हम अपने सभी सहयोगियों—पाठकों का अभिनन्दन करते हैं

कागज का मूल्य तीन गुना हो जाने पर भी हम आपके ही बल पर अधिक से अधिक सामग्री देने के लिए प्रयत्नशील हैं।

अतः प्रत्येक पाठक का कर्त्तव्य है कि वे

कम से कम ५ सदस्य बनाकर ५० रु०

१५ मई १९७४ तक मेज सहयोग दें

१५ मई के १ दिन बाद भी यह सुविधा न दी जायगी

जून मास में प्रकाशित होने वाला बड़ा—महत्वपूर्ण विशेषांक जिसका मूल्य ५ रु० होगा। अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र, स्वामी ब्रह्ममुनि जी की अनुपम रचना—भी सदस्य प्राप्त कर सकेंगे। —सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इतिहास

'अर्जुन ने कहा था'

—डा० राम कुमार

मौन-मुग्ध प्रकृति ने आँखें खोलीं और देखा धर्म भूमि कुरुक्षेत्र में युद्ध की इच्छा से पांडव और कौरव सेना मोर्चा बांधे खड़ी हैं। प्रकृति ने गौर से देखा कि पाण्डु के पुत्रों की सेना की व्यूह रचना द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न कर रहे हैं जिसमें धनुर्धारी, शूरवीर-युधामन्यु, विराट् और महारथी द्रुपद और सुभद्रा का पुत्र अभिमन्यु, द्रोपदी के पांचों पुत्र, वीर्यशाली त्तमौजो, धृष्टकेतु, कुन्तिभीज और अपने-अपने हथियार धारण किये पांचों पाण्डव खड़े हैं। प्रकृति ने दूसरी ओर भी दृष्टि डाली—आचार्य द्रोण, भीष्म, कर्ण, अश्वत्थामा, सोमदत्त का पुत्र भूरिश्रवा और अनेक प्रकार के शस्त्र धारण किए हुए कौरव-पुत्र आदि सभी योद्धा सेना नायक के आदेश की प्रतीक्षा में खड़े हैं। प्रकृति को स्मरण हो आया कौरव और पाण्डव तो भाई ही हैं...फिर क्यों अनर्थ को निमन्त्रण दे रहे हैं? उसने गहरी सांस ली...क्षण भर के लिए प्रकृति के नेत्र बन्द हो गये और जब खुले तो आंखों में आँसू छलक आये और न चाहकर भी पेड़ पौधों पर लगे फूल-पत्तों के माध्यम से वे आंसू कुरुक्षेत्र की पावन धरा पर ढुलक पड़े। इस अनर्थ को न देखने की इच्छा से प्रकृति ने अपना मुंह फेर लिया।

फिर तो अनेक शंख और भेरी, ढोल और मृदंग तथा नरसिंह आदि वाद्य यन्त्र एक दम बज उठे। इस भयानक शब्द से आकाश और पृथ्वी का हृदय भी कांप उठा। विनाश का पाषाण हृदय भी एक बार तो धड़क उठा और उसने पृथ्वी के गर्भ में कहीं छिप जाने का प्रयत्न किया किन्तु कहां छिपे? क्या नियति भी उसे बचा सकेगी? नहीं...नहीं ऐसा नहीं होगा। खून के प्यासे परमात्मा खण्डों को निस्तब्ध देखकर विनाश ने नियति के पैरों गिरकर प्रार्थना की इन्हें बचाओ अदृश्य। इन्हें बचालो। तुम मेरी ओर देखो अन्यथा मेरे भविष्य का क्या होगा? क्या मैं फिर संसार के सामने सीना तानकर खड़ा हो सकूंगा? नहीं, नहीं ऐसा मत होने दो। कहीं भाई ने भाई के सामने तलवार उठाई है?' विनाश रो पड़ा किन्तु नियति उसकी ओर निर्निमेष निहारती रही। विनाश भावना शून्य हो गया और पागल की तरह बड़बड़ाता हुआ नियति की ओर से मुंह मोड़कर चल पड़ा।

इसके उपरान्त धृतराष्ट्र के पुत्रों ने मोर्चा बांधा और जब शस्त्र चलने को ही थे तो वानर की ध्वजा धारण किये हुए रथ सहित अर्जुन युद्ध संचालन की व्यवस्था देखने आगे बढ़े और सारथी श्री कृष्ण ने उनका रथ दोनों सेनाओं के बीच ला खड़ा किया। अर्जुन के नेत्र उठे और उन्होंने अपने बड़ों, पितामहों, आचार्यों, मामों, भाईयों, पुत्रों और स्नेहियों को दोनों सेनाओं में युद्ध के लिए तत्पर देखा। अर्जुन को अपने ऊपर विश्वास नहीं हुआ और वे कृष्ण की ओर देखकर गम्भीर हो गए। उन्होंने फिर एक बार भीष्म, द्रोण और उन सम्बन्धी राजाओं की ओर देखा, जिनकी भुजाएं युद्ध के लिए फड़क रही थीं। अर्जुन का मन करुणा और शोक से भर गया। अंग शि-

 Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शिथिल हो गए और शरीर कांपने लगा। गाण्डीव धनुष हाथ से फिसलने लगा और त्वचा में जलन उत्पन्न होने लगी। ज्यों-ही कृष्ण ने मुड़कर अर्जुन की ओर देखा वे स्वयं घबरा गए। किन्तु उन्होंने ऐसी अवस्था में भी रथ को आगे बढ़ाकर अर्जुन को सम्भालना चाहा। अर्जुन की वाणी लड़खड़ा गयी और वे बड़ बड़ाने के स्वर में कहने लगे—'मुझे वापिस ले चलो केशव! मैं युद्ध नहीं कर सकता। मेरा मन चक्कर खा रहा है और मैं खड़ा रहने में भी असमर्थ हूँ। लक्षण भी विपरीत दिखाई दे रहे हैं तथा मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि युद्ध में अपने ही वंश को नष्ट करके हमारा कोई कल्याण न होगा। अर्जुन को शिथिल हुआ जान कर श्री कृष्ण ने गम्भीर वाणी में कहा 'वीर होकर युद्ध में कायरता दिखाते हो अर्जुन! उठो, कर्त्तव्य को तो देखो। इतना अधिक आगे बढ़कर लौटने का प्रयास मत करो। "नहीं, नहीं माधव! मुझसे युद्ध नहीं होगा। मैं विजय की इच्छा नहीं करता और मुझे रक्त के सने हुए राज्य से कोई मोह नहीं। हे गोविन्द! हमें ऐसे राज्य, जीवन और सम्मान से क्या मिलेगा जिस में गुरुजन, बड़े-बूढ़े, लड़के, दादा, मामा आदि सगे सम्बन्धियों के जीवन का विनाश होता हो।" अर्जुन ने अपने आपको सम्भालते हुए बड़े ही संयत शब्दों में कहा।

अर्जुन की बातें कृष्ण को सही जान पड़ीं किन्तु गम्भीर होकर उन्होंने मन ही मन विचार किया कि इस स्थिति तक आकर क्या लौटना होगा? क्या धर्म भूमि कुरुक्षेत्र का इतिहास कायरता से कलंकित नहीं होगा। अर्जुन की इस हीन भावना से क्या अधर्म की विजय नहीं होगी? और भी न जाने कितने प्रश्न कृष्ण के मानस पटल पर त्रिशूल की तरह चुभ गये। वे कुछ क्षणों के लिए अपने आप में ही खो गए फिर सयंत होकर ओज पूर्ण वाणी में अर्जुन से कहने लगे—'उठो अर्जुन, धनुष सम्भालो। देखो प्रकृति का वह आलोक जिसमें एक भावना उभर कर सन्देश दे रही है—अन्याय के विरुद्ध लड़े जाने वाले युद्ध में ये लोग न तुम्हारे गुरु हैं और न स्वजन, वे तो मात्र निभित हैं और फिर यह तो धर्म युद्ध है। उठो और युद्ध करो।

"धर्म युद्ध की दुहाई देकर विनाश को आमंत्रित मत करो केशव! कुल के नाश से होता हुआ पाप मुझे साफ दिखाई दे रहा है तथा धर्म के नष्ट होने से सारे कुल के पाप को मैं सहन नहीं कर सकूँगा।" अर्जुन ने गम्भीरता से कहा। वह निराशा एवम् शोक से इतना व्याकुल हो गया कि उसने तूणीर सहित धनुष को पृथ्वी पर फेंक दिया और रथ के पृष्ठ भाग में जाकर बैठ गया। उधर अर्जुन के इस निर्णय को सुनकर प्रकृति हंस पड़ी।···किन्तु मानव धर्म एवं कर्त्तव्य से प्रेरित होकर माधव के कहने पर अर्जुन ने फिर धनुष उठा लिया और रथ चल पड़ा···उसी कर्म भूमि की ओर।

मुक्त कर्म

एक धधकते हुए ज्वालामुखी की तरह
यह देश कितना अशान्त है!
और
इस देशके भाग्य निर्माता, छोटे और बड़े,
वन्दर बाँट में लगे हैं, और
जिसे मिलता नहीं वह किट-किटाता है,
नैतिकता की दुहाई देता है।
देश की संस्कृति के अमर गायक
उसे पश्चिम से टकरा कर
नष्ट कर देना चाहते हैं।
जानते हो क्यों?
इसलिए कि आधुनिक बन जाने के
प्रयत्न में
विघटनकारी प्रवृत्तियों को जन्म देकर,
अपने स्वरूप की प्रतिस्थापना
करना चाहते हैं।

—विजयकुमार

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अपराधी और दण्ड विधान

☐ अमलतास

—हत्यारा जा रहा है। किसी ने एक वाक्य हवा में उछाल दिया। लोग रास्ते में चुपचाप गुजर रहे उस अजनबी आदमी के पीछे हो लिये मानो किसी गांव में ऊंट आ गया हो। बच्चे हत्यारा-हत्यारा चिल्लाने लगे। वैसे आदमी था तो अजनबी, पर उसके माथे पर अंग्रेजी का 'यम' अक्षर दगा हुआ था जो अंग्रेजी शब्द मर्डरर (हत्यारा) का संक्षिप्त और सांकेतिक रूप था। अजनबी घूमकर उन्हें घूरता और आगे बढ़ जाता। समाज का कोई भी व्यक्ति उसे पनाह देने को तैयार न था। कोई ऐसा न था जो प्रेम और सहानुभूति के दो शब्द उसे सुनाता। बिचारा गांव से निकल कर एक घने पेड़ की छाया में रुका तो एक लेटे हुए एक आदमी को देखा। उस आदमी को देखते ही उसके चेहरे पर खुशी की लहर दौड़ गयी।

इस खुशी का कारण था—उस दूसरे आदमी के माथे पर अंग्रेजी का 'टी' दगा होना। कहते हैं चोर चोर मौसेरे भाई। टी अक्षर थीफ (चोर) का सांकेतिक रूप था। लेटा हुआ आदमी उठ बैठा और बड़े प्यार से आगन्तुक 'यम' को अपने पास बैठाया और दोनों मुस्कराने लगे। कई दिनों बाद दोनों के चेहरों पर मुस्कान आई थी। यह मुस्कान क्षणिक थी। दोनों व्यक्ति इस नारकीय जीवन से ऊब चुके थे।

—मेरे पास जहर है।

—तो फिर ?

—मैं इस जीवन से ऊब चुका हूँ।

—मैं भी।

—तो फिर क्यों न हम दोनों जहर पी लें।

चोर की यह बात सुनते ही हत्यारा बड़े गौर से उसे देखने लगा मानो पूछ रहा हो कि क्या हमारे कर्म की परिणति यही है।

—हां दोस्त ! आओ हम दोनों जहर पीकर इस नारकीय जीवन से मुक्त हो लें क्योंकि सम्मान पूर्वक जीने के सारे रास्ते बन्द हो चुके हैं। कहते हुए चोर ने अपनी जेब से एक शीशी निकाली और उसका आधा भाग पीकर शेष हत्यारे की तरफ बढ़ा दिया। हत्यारा भी उसे पी गया और दोनों सो गये।

यह घटना आज की नहीं, सत्रहवीं शताब्दी की है। भारत की नहीं, ब्रिटेन की है। इस प्रकार के तमाम दण्ड विधानों का जिक्र 'द स्टोरी ऑफ पनिशमेन्ट' नामक पुस्तक में हुआ है। ऋग्वेद जो भारतीय संस्कृति, सभ्यता, व्यवस्था और राजनीति का मूल माना जाता है, में भी अपराधी के शरीर पर इस प्रकार के चिन्ह दागने का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद में जो दण्ड विधान है। वह इससे भी अधिक भयंकर और क्रूर है। वेदज्ञों का मत है कि अपराधियों को दिया गया इस प्रकार का भयंकर दण्ड सामान्य व्यक्तियों में एक प्रकार का आंतक पैदा कर देता था। जिससे वे किसी भी प्रकार का अपराध करने का साहस ही नहीं जुटा पाते थे। इस संदर्भ में दो मन्त्र विचारणीय हैं—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इन्द्र समत्सु यममानमार्यं प्रावद्विश्वेषु
शतभूतिराजिषु स्वर्मील्हेष्वाजिषु ।
मनवे शासद्व्रवान्व चं कृष्णामरन्धयत
दक्षन्न विश्वं ततृषाणमोषतिन्यर्शं नमोयति ।।

—राजा, सेनापति एवं अन्य अधिकारी प्रजा की रक्षा एवं व्यवस्था करें। आचार, मर्यादा एवं धर्म के विरुद्ध कार्य करने वाले उद्दण्ड व्यक्तियों का दमन करें। पापी तथा निन्दनीय शत्रुओं की सेना का विनाश करें अथवा अपराधियों की त्वचा को आग से दग्ध करके काले रंग की कर दें। काले रंग की त्वचा अपराधी के शरीर पर उसके अपराध की अमिट छाप छोड़ देगी। कृष्णवर्ण त्वचा अपराधी के अपराध का प्रमाण पत्र हो जायेगा।

अद्या मुरीय यदि यातुधानो अस्मि यदि वायुस्ततय पुरुषस्य ।
अद्या स वीरं दर्शभिवि यूया योमामोधं यो यातुधानेत्याह ।

—यदि मैं मानव समाज या प्राणियों के कष्ट का कारण बनूँ अथवा मेरे कारण किसी को कष्ट उत्पन्न हो तो मैं आज ही मृत्यु को प्राप्त होऊं।

उपर्युक्त दोनों मंत्रों में अपराधी के प्रति कठोर दण्ड का विधान है। समाज में अव्यवस्था फैलाने वालों की त्वचा अग्निदग्ध कर विकृत कर दी जाती थी तथा मानव समाज में अव्यवस्था फैलाने वाले को मृत्यु दण्ड दिया जाता था।

आज शासन की ढुल मुल नीति, कानून का हद से अधिक लचीला होना तथा रिश्वत खोरी के कारण लोगों के मन से दण्ड की भयंकरता का अहसास खत्म हो चुका है। इसी कारण व्यवसायी हत्यारे, लुटेरे. चोर, गुण्डे खूब पनप रहे हैं। समाज दिन प्रतिदिन निराशा के अन्धकार में डूबता चला जा रहा है। अपराध और अपराधी बढ़ते जा रहे हैं। सजायें और दण्ड कम होते जा रहे हैं। बुद्धिजीवी टुकुर-टुकुर देख रहे हैं।

हर जन खामोशी से उस शासन का इन्तजार कर रहा है जो वेद के दण्ड विधान को लिये अपराधियों का शमन करने का दृढ़ संकल्प लिये हो।

अत्यधिक धन संग्रह करके उसका उपयोग जन कल्याण के लिये न करने वाले के लिये कहा गया है—

विसर्मांणं कृणुहि वित्तमेषां ये भुञ्जते अपृणन्तो न उक्थैः ।
अपवृतान्प्रसवे वावृधानान्व्रह्मादिषः सूर्याद्यावयस्व ।।

—उत्तम ऐश्वर्य में रहकर भी जो अपनी अपार सम्पत्ति का उपयोग विद्वानों की प्रेरणानुसार जन कल्याण में खर्च न करें उन्हें सूर्य के प्रकाश से रहित स्थान में, जहां प्रबलतम अंधकार हो, काल कोठरी में डालकर दण्ड देने का विधान है।

पूंजीवाद के बढ़ते चरण और नक्सलवाद के रूप में उभर कर शान्त हो चुके ज्वालामुखी के चरण कुछ ऐसा पूर्वाभास दे रहे हैं कि इस मन्त्र का उपयोग अगर शासनाध्यक्षों ने न किया तो जनता खुद करेगी।

आदर्श मानव समाज की कल्पना में डूबकर हम यथार्थ को नकार कर दण्ड को अति न्यून करते जा रहे हैं जिससे अव्यवस्था का दानव अपना मुंह फैलाता जा रहा है। बार बार ऋग्वेद के मन्त्र चेतावनी दे रहे हैं कि अपराध और अपराधियों को कम करने के लिये सही न्याय और क्रूर दण्ड विधान आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सॉरी !

व्हेरी सॉरी !

—देवराज दिनेश

इस पर तो उठ ही नहीं सकता प्रतिवाद
यदि हम सब मिलकर करें,
सॉरी शब्द के निर्माता का धन्यवाद ।
सच कहता हूं तात !
इस पर तो विरोधी दल देंगे हमारा साथ ।

आँग्ल भाषा का यह शब्द,
जब हिन्दी के होठों पर इतराता है
मन सिहर उठता है, तन झूम जाता है ।
स्वर्ग में या जहाँ कहीं भी हो इसका निर्माता
बन बैठा आज के समाज का विधाता ।
इसे सुनकर कई बार सिहरन भी होती है,
खीज भी आती है ।
किसी की बेहूदगी से चारों खाने चित्त हम, सड़क पर आते हैं
गुस्से से भरे हुए खूब तिलमिलाते हैं ।
पर जब दूसरा सॉरी कह देता है,
होठों तक आयी हुई गाली फिर दिल में आ जाती है
अधर मुस्कराते हैं, तबियत झुंझलाती है ॥
'सॉरी' शब्द एटम से बड़ी शक्ति वाला है
मानव समाज को इसने मथ डाला है ।

थोड़ी-सी चिहुंक कर,
कोयल-सी कुहुक कर
कोई चन्द्रमुखी जब सॉरी शब्द कहती है
लगता वसंत की बयार तब बहती है ।
फूहड़ से फूहड़ इन्सान खिल जाता है
गधा भी घोड़े की तरह हिनहिनाता है
बुड्ढे भी सपनों की दुनियां से जगते हैं
जवान बिना पिए ही पिए से लगते हैं ।

अब एक दिन की सुनिए बात
बाहर होकर हटी थी बरसात

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

किसी डिनर पार्टी में जाने को—
सजे धजे दुल्हे की तरह हम,
संभल-संभल कीचड़ पर धरते थे पांव
जैसे कोई गोरी जा रही हो पिया के गाँव।
कहीं, कोई कीचड़ की छींट सूट पर न पड़ जाय,
अपनी शान का पंख यहीं न झड़ जाय।
सूट भी किसी मित्र का था मंगवाया उधार
उसने कहा था—संभाल कर रखना यार!
ग्यारह बजे मुझको भी नाइट क्लब में जाना है
इकलौते सूट का रौब दिखलाना है
नाइट क्लब में भाषण हम झाड़ेंगे
गड़े मुर्दों को फिर से उखाड़ेंगे।
ठुमुक ठुमुक कर चलते थे, मन में रख ध्यान
तभी एक शिखंडी ने कृपा कर दी श्रीमान॥
अपनी कीचड़ भरी साइकल हमसे आ टकराई
मन रो उठा, आँखों में गुस्से की ज्योति लहराई॥
तभी वह फुटबाल से मुंह को पिचकाते हुए
कह उठे, अपने पीले दांतों को दिखाते हुए—
"सॉरी वैरी सॉरी"
तना हुआ हाथ ढीला पड़ गया
नकली शांति दिखाने में लग गयी आंखों की त्योरी
वाह री सॉरी!
मन ही मन खून का घूंट पीते हुए अनायास कहा—
जाइए कोई बात नहीं, ऐसा हो ही जाता है॥

× × ×

इस शब्द के हैं कई शेड, कई रंग
कई बार तो यह मचा देता है खासा हुड़दंग
कई लोग इसे रोग की तरह पालते हैं
सोते जागते, उठते बैठते, गेंद की तरह उछालते हैं।
टकराने की सम्भावना से पहले ही कहेंगे "सॉरी"
गंजे सिर पर ज्यों गिरती है निमौरी।
एक दिन हमने देखा,
एक पंजाबिन मुटियार
ढाई मन की नार!
फुटपाथ पर जा रही थी,
दिल्ली की जिन्दगी में नयापन ला रही थी!
सामने से एक मजनूं कट जवान
मुगलिया कट डाढ़ी मूंछ, हीरो जैसी शान,
चलते थे धरती पर,
किन्तु आंखें ऊंचाई पर अटकी थीं
छत पर खड़ी देवियों के दर्शनों में भटकी थीं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
किस्मत के मारे पहाड़ से टकरा गये
आसमान से सीधे ही धरती पर आ गए।
टकराते ही बोल उठे—सॉरी।
उसकी भी चढ़ गई त्यौरी
कस कर दिया एक मर्दाना हाथ
पलक झपकते ही धरती सूंघ गये तात।
किसी की भी नहीं समझ में आ रही थी बात।
वह गुर्राई—
"सॉरी तेरी भैण, तेरी मां
तैनूं टकरान नुं होर कोई नहीं मिली थी" ॥
सॉरी शब्द अपने कई लटके दिखाता है
पंजाबी भाषा में "सास" बन जाता है
अनपढ़ों से टकराने पर खूब पिटवाता है ॥

× × ×

एक दिन, एक तिलक छापाधारी साहेब ने कहा—
सुनिए दिनेश जी,
बात है विशेष जी।
सॉरी शब्द संस्कृत के शौर्य शब्द से बना है ॥
मैंनें झट लेकर काफी की चुस्की
दूर की गले की खुश्की
और कहा—आप ठीक फरमाते हैं।
सॉरी और शौर्य में पति पत्नि का नाता है
तभी तो शौर्य सॉरी के आगे झुक जाता है
गुस्से से बोले—
मजाक की नहीं है बात
मैं तुम्हें समझाता हूँ तात!
मैंने कहा—सॉरी! आओ और कोई करें बात।
कई लोग सॉरी को सारी भी कहते हैं
इसके सहारे वे मस्ती में रहते हैं।
करते हैं ऐसा कमाल,
सारी के बल पर, खाते हैं उधार का माल।
इसी के सहारे वे चलाते हैं जिन्दगी की गाड़ी
खुद पीछे रहते हैं, अपनी मजबूरी कर देते हैं अगाड़ी ॥
मुझसे किताबें लीं, आपसे हैंड बेग
इनसे सूट टाई ली, इनसे ली साड़ी
सॉरी के सहारे, चरते फिरते हैं दूसरों की बाड़ी।
जब यह चीजें अजायबघर में रखने के काबिल हो जाती हैं
सॉरी की बैसाखी के सहारे घर लौट आती है ॥
और हम कोई बात नहीं कहते हुए
सॉरी के छले हुए आंसू बहाते हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक दिन एक साहब, महीनों बाद
लौटाने आये किताब
और मैं उस विधवा बनी किताब की
तस्वीरों का करने लगा हिसाब
बोले—सॉरी ! चित्र तो तुम्हारे भतीजे ने
अपने एलबम के लिये फाड़ लिए हैं।
मुझे लगा जैसे,
किसी ने मैना के पंख झाड़ लिए हैं।
किन्तु, यहीं पर नहीं रुकती बात
उन्होंने झट, एक नई किताब पर रखा हाथ।
'कल पढ़कर लौटा देंगे,
हम नहीं आए तो किसी के हाथ पहुंचा देंगे।
मैंने कहा—सॉरी।
सुनते ही चढ़ गयी उनकी त्यौरी।
वे झुंझलाते रहे, झल्लाते रहे
किन्तु हम, सॉरी की रट लगाते रहे।
इस तरह सॉरी के बल पर बच गयी अपनी किताब।
अब आप समझें सॉरी का हिसाब।
मित्र के नाते,
आप सबको किए देता हूं खबरदार
मुझसे कोई चीज न मांगियेगा उधार
वरना मैं कह दूंगा—सॉरी,
वैरी सॉरी

प्रत्येक 'जन-ज्ञान' का सदस्य वेद घर में लाएं।

प्रभु की अमरवाणी के बिना मनुष्य का कल्याण सम्भव नहीं

क्या आपके घर में वेद अभी तक नहीं आए ?

तो निश्चय कीजिए और आज ही मंगवाइए

केवल जन-ज्ञान के सदस्यों के लिए विशेष रियायत

जन-ज्ञान के सदस्य–केवल एक सैट १०१) में मंगा सकते हैं। शीघ्रता करें।

यह रियायत केवल १०० सदस्यों को ही दी जाएगी। बाद में आने वालों का धन वापिस लौटा देंगे। —सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जीवन-यज्ञ

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। "Man is a social animal." प्रत्येक मनुष्य समाज के ऊपर आश्रित रहता और उन्नति की ओर अग्रसर होता है। कर्म-काण्ड एवं धर्म शास्त्रों के अनुसार मनुष्य को किए गए उपकार जो समाज के जरिए हुआ है उससे उऋण होने के लिए पांच महायज्ञों का विधान किया गया है।

"ऋषियज्ञं देवयज्ञं भूतयज्ञं च सर्वदा।
नृयज्ञं पितृयज्ञं च यथा शक्ति न हापयेत् ॥मनु० ४.२१॥

इन पांच महायज्ञों में सर्व-प्रथम ब्रह्म यज्ञ अर्थात् सन्ध्या आती है। सन्ध्या में प्रथम आचमन-मन्त्र "ओ३म् शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये शंयोरभिस्रवन्तु नः" "॥यजु० ३६/१२॥" और फिर दूसरा इन्द्रिय स्पर्श मन्त्र "ओ३म् वाक् वाक्" से ओ३म् करतल कर पृष्ठे तक" इस मन्त्र के अन्दर एक वाक्य आता है:—"**ओ३म् प्राणः प्राणः**" ॥ अथर्व० १९/६०/१-२ ॥ इस वेद मन्त्र में परम-पिता परमात्मा से यह प्रार्थना की गई है कि हे पिता! मेरी नासिका तथा प्राण शक्ति पुष्ट और बलिष्ठ हों तथा हम दीर्घायु हों। प्राण का एक अर्थ है श्वासप्रश्वास तथा जो दूसरा प्रसिद्ध अर्थ है, वह है जीवन। प्रायः सभी मानव दीर्घायु बनना चाहते हैं। सर्वदा चाहते हैं कि सम्पूर्ण आयु भर सुख पूर्वक रहते हुए ऐश्वर्यों का उपभोग करें। कोई विरला ही होगा जो ऐसा न चाहता हो। परन्तु दीर्घायु के साथ-साथ यह जीवन यथार्थ में मानवतापूर्ण हो, तभी लम्बी आयु का लाभ है। नीतिकार ने ठीक ही कहा है:—"**यज्जोव्यते क्षणमपि प्रथितं मनुष्यैः विज्ञान-शौर्य-विभवार्य-गुणैः समेतम्। तन्नाम जीवितमिह प्रवदन्ति तज्ज्ञाः काकोऽपि जीवति चिरायचबलिं च भुंक्ते॥**" वैसे तो कौआ भी चिरकाल तक जीता है। इसकी आयु सौ वर्ष से भी अधिक होती है। यह विकृत अन्नों को भक्षण करता हुआ जीता है इसी तरह अन्य सहस्रों योनियां जीती हैं। खाते-पीते-विषय-भोग करते हुए जीना कोई जीना नहीं। यह मनुष्य जो विलक्षण बुद्धि का स्वामी विशाल मनोबल का अधिष्ठाता, उत्कट प्राण बल का अधिपति इतने तुच्छ प्रयोजनों के लिए जिये तो क्या लाभ? तब यह मानव जीवन व्यर्थ ही हुआ। तो अब प्रश्न है कि जीवन क्या है और जीवन किसे कहते हैं? विज्ञान नीतिकार ने कहा – कि विज्ञान, शौर्य (वीरता), विभव (धनैश्वर्य) तथा गुणों से युक्त होकर, संसार में यशस्वी होकर जीना ही वास्तव में जीना है। जीवन रूपी हीरे के पारखी को अर्थात् मूल्य को आंकने वाले इसी को जीवन कहते हैं।

अब प्रश्न उठता है कि हम इन गुणों की प्रेरणा कहां से लें? इसके लिए वेद ने कहा:—"**अग्निना अग्निः समिध्यते**" अर्थात् अग्नि से अग्नि जलती है। दीपक से दीपक जलता है। जीवन से जीवन बनता है। तात्पर्य यह है कि जीवनों से जीवन

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

को प्रेरणा मिलती है। मच्चे एवं श्रेष्ठ पुरुषों की जीवनियों का हम पठन-पाठन, श्रवण-मनन-चिन्तन तथा तदनुसार आचरण करके अपने जीवन को ऊंचा बना सकतेहैं।

"आयुषा आयुष्कृतम् जीव आयुष्मान जीवमा मृथाः।
प्राणेमात्मवतां जीव मा मृत्योरुद् गावशम् ॥"

जीवनवान् महात्माओं, महावीरों, महाकवियों, ऋषि-मुनि-योगियों तथा देवों के जीवनों से शिक्षा लेते हुए हे मनुष्य ! तू दीर्घ, श्रेष्ठ, यशस्वी जीवन व्यतीत कर। जीते जी मत मर। मूढ़, निष्कर्मण्य, कायर, कृपण, अज्ञानी, मूढ़, दरिद्र, लोलुप, आधीन में रहकर, मिथ्यावादी, चोर-डाकू जुआरी होकर जीना मृत जीवन है। वेद माता कह रही हैं:—"**कुर्वन्नेहवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ँसमाः**" अर्थात् शुभ कर्मों को करते हुए सौ वर्ष तक जीवन व्यतीत करो। आत्मवान् उच्च आत्म-शक्ति रखने वाले वीरों के समान जीवन व्यतीत कर। शत्रु को वश में रखो, तुम उसके वश में न रहो। मृत्यु तुम्हें भयभीत न कर सके।

वेद भगवान् ने श्रेष्ठ जीवन की परिभाषा एक और ढंग से एक छोटे वाक्य में दे दी है—"**प्राणो यज्ञेन कल्पताम्।**" यह जीवन यज्ञ से हो और यज्ञ के द्वारा सफल हो। हम इस जीवन को यज्ञमय बना दें। इस मानव-जीवन से अधिकाधिक यज्ञ कर सकें। परोपकार कर सकें तथा जनता जनार्दन के इसे अर्पण कर सकें। मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य है और होना चाहिए। कहने का तात्पर्य है यह कि हम अपने जीवन को इस प्रकार बना दें जिससे हमारे जीवन से दूसरे का जीवन बने। एक कथा आती है। एक व्याध जंगल में शिकार की खोज में दिन भर घूमता रहा। पर उसे कोई शिकार हाथ न लगा। हारकर वह लौट रहा था। उसी समय जोरों की आँधी के साथ वर्षा आई। अचानक आँधी की लपेट में एक कबूतरी व्याध के सामने गिरी। व्याध ने उसे पकड़ कर अपने पिंजरे में डाल दिया। इधर घोंसले में कबूतर सोच रहा था कि कबूतरी अभी तक नहीं आई, क्या बात है। इस प्रकार वह दुःखी हो रहा था। व्याध घूमते हुए उस वृक्ष के नीचे आ पहुँचा, जहां कपोत का घोंसला था। कपोत अपनी प्रिया को पिंजड़े में देखकर बहुत दुःखी हुआ। लेकिन वह कबूतरी अपने पति से बोली कि ये हमारे द्वार पर अतिथि आए हैं, इनकी सेवा करनी चाहिए। व्याध जाड़े से ठिठुर रहा था। कबूतरी ने कहा इनके लिए आग जलाइये और कबूतर आग का कहीं से तिनका उठा लाया है। आग से तपने के बाद व्याध की क्षुधा जगी और क्षुधा तृप्ति के लिए वह कपोत अग्नि में कूद पड़ा। माँस खाकर व्याध तृप्त हुआ। व्याध इस बलिदान को देख कर चकित रहा। उसने कबूतरी को मुक्त कर दिया। कबूतरी सोचने लगी बिना पति के जीना व्यर्थ है। यह सोच वह कबूतरी आग में जल मरी। व्याध के मन में बड़ी ग्लानि हुई। और उस दिन से उसने व्याध का काम छोड़ दिया।

साधक कह रहा:—"**भूताय त्वा नरातये**" हे मेरे जीवन ! मैं तुझे प्राणी मात्र की सेवा के लिए लगा दूं। मेरा जीवन अरातियों, स्वार्थों, कृपणताओं या अकर्मण्यताओं के लिए नहीं है।

प्राचीन युग से आज तक हम जिन जीवनवान्, प्राणवान् महापुरुषों की जीवनियाँ पढ़ते आए हैं, उनमें यज्ञीयता परोपकार, पर सेवादि विशिष्ट गुण रहा है। आइए ! हम मिलकर उनका अध्ययन करें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महर्षि दधिचिः—इन्होंने देवों की रक्षा के लिए सहर्ष अपनी हड्डियाँ दी थीं।

भीष्म पितामहः—भीष्म पितामह ने सत्य की विजय के लिए अपने जीवन की चिन्ता जरा भी नहीं की और मृत्यु का रहस्य पाण्डवों का बता दिया। **"यशः शरीरे भव मे दयालुः"** जीवनवान् महात्मा अपने यश रूपी शरीर की चिन्ता करते हैं इस पञ्चभौतिक शरीर का मोह उन्हें जरा भी नहीं।

महामानवों के जीवन ज्योतिस्तम्भ होते हैं। वे भावी सन्तानों के लिए मार्ग-दर्शक होते हैं। अतः **"महाजनो येन गताः स पन्थाः"** वही मार्ग है जिससे महात्मा-पुरुष गए हैं, हम उन प्रशस्त मार्गों का अनुसरण करते हैं करें।

दानवीर कर्णः—महाभारत में कर्ण की दान वीरता प्रसिद्ध है। अङ्गराज कर्ण की यह प्रतिज्ञा थी कि मेरे पास जो कुछ है, मैं देने में कुछ भी संकोच नहीं करूँगा। एक बार प्रातःकाल महाराज कर्ण क्षौर कर्म करवा रहे थे। एक ब्राह्मण ने आकर निवेदन किया 'महाराज मैं निर्धन हूँ' कन्या का विवाह उपस्थित है। दस तोला सुवर्ण की आवश्यकता है। कर्ण ने ब्राह्मण देवता की मांग सुनकर नाई से कहा, भाई जरा ठहरो हजामत आधी ही हुई थी, दानवीर बीच में ही उठकर और ब्राह्मण को १० तोले सुवर्ण देकर कृतार्थ किया। नाई ने पूछा ऐसी क्या बात थी, जो पूरी बनाए बिना उठ कर चल दिए। महाराज कर्ण ने कहा:—"भाई तत्काल दान शुभफलदायक होता है क्या पता कि हजामत की समाप्ति तक सुवर्ण की मात्रा का विचार कम कर देता।

एक समय की और घटना महाभारत में आती है। राजा कर्ण अर्जुन के शस्त्रास्त्रों से घायल कुरुक्षेत्र की रणभूमि में पड़े थे और अन्तिम सांस ले रहे थे। श्री कृष्ण ब्राह्मण का वेष बना अर्जुन को शिष्य बना कर्ण के अन्तिम दर्शन के लिए चल पड़े। कुरुक्षेत्र की भूमि में जाकर उच्च स्वर से कहते हैं:—"राजा कर्ण की जय, दानवीर कर्ण की जय।" कर्ण ने आंखें घुमाकर देखा, दो ब्राह्मण पैरों की ओर खड़े हैं। पूज्य ब्राह्मणों का स्वागत! मैं बड़ी विकट स्थिति में हूँ, आप कैसे आए? "कर्ण ने कहा।" "हमें कुछ स्वर्ण चाहिए दानवीर! श्री कृष्ण ने कहा।" इस पर, कर्ण ने कहा आप मेरे भवन में चले जाएं, रानी अवश्य आपकी इच्छा पूरी करेगी। मेरी अवस्था तो आप देख ही रहे हैं।

अङ्गराज! हमें गृह का पता नहीं, कहां भटकते फिरेंगे। अस्तु चलते हैं। नहीं! नहीं आप जरा ठहरें। मुझे याद आया, मेरे दान्तों में सुवर्ण की दो कीलें लगी हैं, यह कहते हुए वीर ने मुक्के के प्रहार से दन्त तोड़कर कहा, लीजिए, कम से कम यह थोड़ा सा स्वर्ण तो ले ही जाइए। दानवीर! हड्डी में जड़े सोने को हम कैसे ग्रहण करें? पर वीर तो वीर ही था। उसने पास ही पड़े पत्थर से दाँत तोड़ कर सोने की कीलें निकाल ब्राह्मण के चरणों में रख दीं। और उसी समय कर्ण धड़ाम से पृथ्वी पर गिर पड़ा। अन्तिम निकट क्षण में भी इस वीर ने अपनी दान-वीरता का श्रेष्ठ उदाहरण उपस्थित किया। श्री कृष्ण ने कहा—दानी कर्ण की जय! महादानी कर्ण की जय! सचमुच, आज दान का महान् सूर्य अस्त हो गया, परन्तु उसकी किरणें, उसके जीवन की ज्योति अपना प्रकाश अनन्त काल तक फैलाती रहेंगी और हम उसके प्रकाश में दान और त्याग की प्रेरणा लेते रहेंगे।

महामानव, ऋषि, जगद्गुरु दयानन्दः—महर्षि दयानन्द जब गुरु विरजानन्द जी के चरणों में रहते हुए मथुरा में विद्याध्ययन कर रहे, थे उससमय नित्य प्रति प्रातः

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

काल यमुना तट पर प्रायः तीन घंटे तक समाधिस्थ रहते थे। सूर्योदय के समय सूर्य की रश्मियां उनके तेजस्वी मुखमण्डल को परमकान्तिमय बना देतीं। एक तरुणी जिसने सन्तान प्राप्ति के लिए सब कुछ कर लिया था, परन्तु जो अब भी निःसन्तान थी। वह नित्य यमुना में स्नान करके सूर्योदय के समय अपने गृह को लौटा करती और उस महामानव के सौन्दर्य पर मुग्ध हो मन ही मन नमस्कार कर चली जाती।

एक दिन समाधि की समाप्ति पर देव दयानन्द ने ओ३म् शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः, कह कर नेत्र खोले तो देखा, एक महिला चरणों में शीश झुका रही है। दोनों हाथ जोड़कर खड़ी हो गई। महर्षि ने पूछा:—"क्या चाहती हो देवी?" आप-सा एक पुत्र स्वामिन्!" बस इतना ही देवी!" हां महाराज। "तो छत्तीस वर्ष का यह दयानन्द आज से आपका पुत्र है और आप हैं उसकी माँ।" "धन्य हो यतिराज!" यह कह कर वह देवी अपने घर चली गई। उसका जीवन पलट गया। उसने सन्तान की कामना का सर्वथा परित्याग कर दिया। क्योंकि अब बन गई थी वह दयानन्द की माता। उसने शेष जीवन पवित्रता से बिताया।

स्वामी विवेकानन्द:—कलकत्ता के बेल्यूर मठ में नास्तिक नरेन्द्र ने उपहास पूर्वक पूछा—क्या ईश्वर है? और, क्या उसे देखा जा सकता है? हां है और उसे वैसे ही देखा जा सकता है जैसे तुम मुझे देखते हो और मैं तुम्हें देखता हूँ। महा-मानव परमहंस रामकृष्ण ने इन शब्दों से नरेन्द्र को आस्तिक बना दिया।

एक दिन नरेन्द्र ने श्री रामकृष्ण परसहंस से निवेदन किया कि कलकत्ता में ऋषि दयानन्द आये हुये हैं, मैं उनका दर्शन करना चाहता हूँ। परमहंस ने कहा—"अवश्य करो, नरेन्द्र हम भी करेंगे।" दोनों उसी दिन सायंकाल महर्षि के निवास-स्थान पर पहुँचे। रामकृष्ण ने देखा नग्नकाय कोपीनधारी दिव्य एवं दीप्त मूर्ति अंधेरे में इधर से उधर घूम रहे हैं। देखकर बोले—निस्सन्देह यह ही आचार्य दया-नन्द हैं। "यह अन्धेरे में कैसे प्रदीप्त हो रहे हैं गुरुदेव"! यह ब्रह्मचर्य की महिमा है नरेन्द्र, मैं भी अखण्ड ब्रह्मचारी रहूँगा गुरुदेव! बड़े सुन्दर विचार और संकल्प हैं नरेन्द्र। तुम्हारा यह व्रत पूर्ण हो। परमहंस ने यह आशीर्वाद दिया। ब्रह्मचारी नरेन्द्र आजन्म ब्रह्मचारी रहने का व्रत लेकर शीघ्र ही संन्यास लेकर स्वामी विवेकानन्द बन गए। उनका लक्ष्य था विश्व को प्राचीन वैदिक संस्कृति का ज्ञान कराना और उसके प्रकाश से संसार को प्रकाशित करना।

———

आवश्यकता है—वरों की

—एक वैश्य बी० ए० उत्तीर्ण कन्या के लिए—
—एक एम० ए० व बी० ए० उत्तीर्ण कन्या के लिए योग्य वर चाहिए। जाति बंधन नहीं—
द्वारा—५७२—जन-ज्ञान नई दिल्ली-५। पत्र लिखें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भ्रान्ति निवारण : इतिहास की साक्षी—

महर्षि दयानन्द का योग बल

— प्राध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु' —

बड़े दुर्भाग्य की बात है कि एक शताब्दी के अन्दर-२ ही महर्षि दयानन्द जी महाराज के सम्बन्ध में नित नई निराधार बातें कहने व लिखने का लोग दुःसाहस करने लगे हैं। विरोधी तो योजनाबद्ध ढंग से महर्षि के बारे में मिथ्या बातें लिखते ही हैं, जाने-अनजाने में अपने को आर्य कहने वाले लोग भी इस पाप के भागी बन रहे हैं जो लोग अनजाने में तथ्यहीन बातें लिखते व कहते हैं, उनका इसमें प्रयोजन तो कुछ नहीं। स्वाध्याय न करने की प्रवृत्ति के कारण वे लोग ऐसा करते हैं। जानबूझ कर उल्टी-सीधी लिखने वालों का प्रयोजन राजनैतिक भी है और व्यक्तिगत प्रतिष्ठा भी। कुछ लोग अपनी दुर्बलताओं को छिपाने के लिए महर्षि के उज्जवल साधनामय जीवन को नीचे लाने का विफल प्रयास करते हैं। ये सब बातें हम आगे स्पष्ट करेंगे।

इन पंक्तियों के लेखक ने अनेक बार व्याख्यानों व लेखों द्वारा समाजों से प्रार्थना की कि ऋषि जीवन की कथा व स्वाध्याय समाज मन्दिरों में होना चाहिये सौभाग्य से एक समाज में यह सुदृश्य देखने को मिला। एक दिन ऋषि जीवन की कथा एक समाज में सुन रहा था तो कथाकार ने पढ़ा कि मेरठ में महर्षि ने किसी से कहा कि यद्यपि मुझे योग-अभ्यास छोड़े कई वर्ष हो गए तथापि मैं अब भी प्राण को शरीर के किसी अंग में केन्द्रित कर सकता हूँ। लोक सेवा के लिए मैंने योग को छोड़ा।

सब श्रोता कथा सुनकर आनन्दित हुए। मुझे यह प्रसंग बड़ा चुभा। सत्संग के उपरान्त मैं इसके प्रतिवाद के लिए उठ खड़ा हुआ। ऋषि जीवन पर निराधार दोषारोपण मेरे लिए असह्य भाव है। फिर कमाल यह है कि ऋषि के मुख से ही ये शब्द कहलवाये गए।

१८८० ई० में अन्तिम बार महर्षि मेरठ पधारे। मेरठ की इस यात्रा के पश्चात् महर्षि तीन वर्ष से भी अधिक समय तक कल्याणी वाणी वेद के प्रचार में लगे रहे। जब महाराज उदयपुर राज्य में वैदिक नाद बजाने गए। उदयपुर में नौ-लखा बाग (सज्जन निवास) में ऋषिवर को ठहराया गया। वहां का महर्षि का दैनिक कार्यक्रम इस प्रकार था:—

"बाग के भ्रमण से निबट कर वहां बाग के दरिघर के चबूतरे की चौकी पर बैठकर ध्यान किया करते थे। उपासना और समाधि के पश्चात् डेरे पर हाथ-मुंह धोकर दूध और ब्राह्मी पीते, फिर वेद भाष्य किया करते थे .....।"

देखिए ऋषि जीवन पं० लेखराम कृत हिन्दी संस्करण पृ० ५९७। फिर इसी पृष्ठ पर आगे लिखा है:—

"एक दिन प्रातःकाल जब स्वामीजी ध्यान से निवृत्त हुए तो दरबार ने प्रश्न किया" महाराज ने महाराणा की जो दिनचर्या बना कर दी उसमेंईश उपासना ध्यान आदि का आदेश दिया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जब महाराज को विष दिया गया

जब महाराज को विष दिया गया तो एक मास षड्यन्त्रकारियों के उलट-सुलट इलाज का भी शिकार बने रहे। इस एक मास में शरीर की जो दुर्दशा की गई उसका उल्लेख यहाँ क्या करें परन्तु, इतना तो सब जानते हैं कि तब भी ऋषिवर ने समाधि को नहीं छोड़ा। प्रमाण एक ही पर्याप्त है।

फिर भाषा में ईश्वर के गुणों का थोड़ा सा कथन कर बड़ी प्रसन्नता और हर्ष सहित गायत्री मन्त्र का पाठ करने लगे और गायत्री मन्त्र के पाठ के पश्चात् हर्ष और प्रफुल्लित चित्त सहित कुछ समय तक समाधियुक्त रह नयन खोल यों कहने लगे कि "हे दयामय, हे सर्वशक्तिमान ईश्वर, तेरी यही इच्छा है, तेरी यही इच्छा है, तेरी इच्छा पूर्ण हो, आ···हा !"

देखिए ऋषि जीवन पं० लेखराम कृत हिन्दी संस्करण पृष्ठ ६२४।

यह है महाराज के अन्तिम दिन का वृत्तान्त। जोधपुर में ऋषि की दिनचर्या का जो वृत्तान्त देश विख्यात इतिहासज्ञ श्री नैनू राम ब्रह्म भट्ट ने दिया है वह किसी जीवन चरित्र में नहीं। मेरे पास वह वृत्त भी है। श्री ब्रहमभट्ट ऋषि के समकालीन ही थे और जोधपुर निवासी थे। उन्होंने भी नियमित रूप से महर्षि द्वारा योगाभ्यास का उल्लेख किया है। अन्य अन्वेषकों गवेषकों व लेखकों ने भी ऐसा ही लिखा है।

तो पाठक स्वयं देख लें कि यह क्या कुचक्र चल पड़ा है कि स्वयं तो लोग स्तुति प्रार्थना उपासना, प्रभुचिन्तन से घबराते कतराते हैं व उपहास उड़ाते हैं और अपनी इस नास्तिक प्रवृत्ति को 'क्रान्तिकारी संज्ञा' लेकर छिपाते हैं। जो चाहे सो लोग करें परन्तु ऋषि को क्यों उनके उच्च आसन से डिगाते हैं ?

उन भक्तों पर रोना आता है जो दुर्भावना तो नहीं रखते सरलता में ही भावावेश में ऐसे धूर्तों का शिकार बन जाते हैं। अमृतसर में प्रादेशिक सभा ने शताब्दी समारोह मनाया। वहां इस अवसर एक सुन्दर भजन संग्रह भी सभा ने वितरित किया उसमें भी एक गीत में यह पद पढ़कर मेरा हृदय रो पड़ा कि यह क्या नास्तिकपन ने आर्यों पर हल्ला बोल दिया:—

भजन संख्या १८ पृष्ठ २५ पर छपा है:—**'देश जाति और धर्म के कारण, छोड़ा योग दयानन्द'**

प्रमाणों से हमने ऊपर सिद्ध कर दिया कि यह सब कुछ अनर्गल प्रलाप, मिथ्या प्रचार है।

ऋषि की योग साधना का दिग्दर्शन उनका सारा जीवन कराता है और महर्षि द्वारा अन्तिम दिनों में रचा उनका अमर ग्रंथ आर्याभिविनय भी उनके योगबल का प्रमाण है। वहां महर्षि ने अपनी योग साधना व वेद विद्या का प्रमाण देते हुए उपासना विषय में एक स्थान पर एक ऐसा वाक्य लिखा है जो गत पांच सहस्र वर्ष में किसी सन्त-साधु के साहित्य में पढ़ने सुनने को नहीं मिला। ऋषि की उस महान् देन, मौलिक सूझ व ईश्वर के प्रत्यक्ष पर हम फिर कभी लिखेंगे। अन्त में सब आर्यों से कहेंगे कि ऋषि के अनुगामी बनकर सच्चे आस्तिक बनो और ईश उपासना को जीवन का अनिवार्य अंग बनाओ। अब तो राजनैतिक स्वार्थों के लिए अपने बनकर शत्रु वेदार्थ ही ऐसे-२ करने लगे हैं कि मैक्समूलर व उसके मानस पुत्रों को भी लज्जित कर दिया है। परन्तु ! ऋषि का तप निष्फल न जाएगा। आप जागो ! चेतो ! उठो !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कर्मठ स्व० ला० चतुरसेन जी !

आजन्म मेरे पथप्रदर्शक

●

आर्य नेता ला० रामगोपाल शालवाले के उदगार

●

भेंटकर्त्ता पं० दीनानाथ सिद्धान्तालंकार

●

'जन-ज्ञान' के लिये विशेष—

"मैंने अपने ५३ वर्ष के जीवन में जो किंचिन्मात्र आर्यसमाज और वैदिक धर्म की सेवा की है, उसके प्रेरणा स्रोत स्वर्गीय ला० चतुरसेन जी ही थे। मेरा हृदय आज भी शोक सागर में निमग्न हो बार बार यही कहता है कि "मेरे मार्ग दर्शक चले गये। लाला जी का सारा ही जीवन, त्याग, मौन सेवा और कठोर तपस्या का था।"

सार्वदेशिक प्रतिनिधि सभा के भूतपूर्व मंत्री, वर्तमान वरिष्ठ उप प्रधान, आर्य केन्द्रिय सभा, दिल्ली राज्य के प्रधान, भूतपूर्व संसद् सदस्य, आर्य नेता श्री लाला राम गोपाल जी शालवाले ने "जनज्ञान के विशेष संवाददाता, श्री पं० दीना नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सिद्धान्तालंकार से यह हार्दिक उद्गार तब प्रकट किए जब वह श्री लाला जी की सेवा में हाल ही में स्वर्गवास हुए आर्यसमाज के कर्मठ, अनथक, लगनशील प्रमुख महानुभाव श्री लाला चतुरसेन जी के सम्बन्ध में उनके अमूल्य संस्मरण जानने के लिए उपस्थित हुए।

प्रथम परिचय—एक पौराणिक द्वारा

आज से लगभग आधी सदी पूर्व १६-१७ वर्ष के किशोर के रूप में दिल्ली में प्रथम बार आने की चर्चा करते हुए रामगोपाल जी ने बताया "एक पौराणिक व्यक्ति के साथ मेरा प्रतिदिन ही प्रायः शास्त्रार्थ होता रहता। उसने मुझे पौराणिक बन जाने का आग्रह किया। पर मेरे अन्दर आर्य विचारों को देख उसने कहा कि "आपको एक ऐसे सज्जन से मिलाना चाहता हूँ जो आपके विचारों का है और एक सनातन धर्मी से संस्कृत पढ़ता है।" संस्कृत पढ़ने में मेरी भी बड़ी रुचि थी। अपने सदृश आर्य विचारों के व्यक्ति से मिलने के लिए मेरी विशेष उत्सुकता होना स्वाभाविक ही था।

किशोर से दृढ़ युवक—प्रेरक लाला जी

यह पौराणिक सज्जन मुझे फतेहपुरी कपड़ा मार्केट में ले गए। वहां जिस सज्जन से उन्होंने परिचय कराया, वह कपड़े की आढ़त की एक दूकान में नौकरी करते थे। यही महानुभाव चतुरसेन जी थे। मेरी इनसे यह पहली मुलाकात थी। अब मैं प्रायः इनसे मिलता रहता और इनके सम्पर्क में अधिकाधिक आता रहा। अब मुझे ऐसा अनुभव होने लगा कि मैं जिस मार्ग दर्शक की खोज में था, उसकी पूर्ति का पूर्ण-रूप यही व्यक्ति है। वह भी मेरे साथ सदा अत्यन्त स्नेह, सहानुभूति और सहृदयता का व्यवहार करते रहे। चतुरसेन जी के इस सात्विक सत्संग से मेरे हृदय में ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों को पढ़ने की अभीप्सा निरन्तर बढ़ती रही। चतुरसेनजी मुझे आर्य साहित्य के पढ़ने में सदा प्रोत्साहन देते रहे। सिद्धान्तों को समझने में जब कभी मेरे हृदय में शंका पैदा होती, वह उसका अच्छी प्रकार समाधान करते। चतुरसेनजी का स्वयं भी गम्भीर स्वाध्याय था और अपने सिद्धान्त को पुष्ट करने के लिए युक्ति और तर्क भी उनके पास प्रभूत थे। वह आयु में मुझ से बड़े थे। फलतः आयु और विद्या दोनों दृष्टियों से मेरी उनके प्रति आदर और सम्मान की भावना बढ़ती गयी। वह निःसंकोच, मुझे अपने दृढ़ आर्य सिद्धान्तों से प्रभावित करते रहे। उनकी छत्रछाया में मैं अब अडिग और उत्साही आर्य युवक बन गया था।

आर्यसमाज का शास्त्रार्थ युग

वह शास्त्रार्थ युग था। आर्य समाज के प्रचार और उसके सिद्धान्तों की श्रेष्ठता और युक्ति युक्तता को बढ़ाने तथा जन साधारण को इस ओर आकृष्ट करने में जितनी शास्त्रार्थों से सफलता प्राप्त हुई, उतनी अन्य किसी साधन से आज तक नहीं हो सकी है। अब शास्त्रार्थ सर्वथा बन्द हो गए हैं, इसलिए आर्यसमाज का प्रचार भी सिकुड़ कर मन्दिरों की चारदीवारी में सिमट गया है।

दिल्ली में आर्यसमाज की ओर से प्रमुख शास्त्रार्थ महारथी पं० रामचन्द्र देहलवी, पं० देवेन्द्रनाथ जी शास्त्री, सांख्य व्याकरण तीर्थ, पं० अम्बाप्रसाद इत्यादि विद्वान् पुरुष थे। उन दिनों के एक महत्त्वपूर्ण शास्त्रार्थ का—जिसमें चतुरसेन जी का बड़ा सक्रिय और प्रमुख महत्व तथा योगदान था—का ब्योरा आपको सुनाना

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चाहता हूँ। इस घटना को सुनाते समय ला० रामगोपाल जी का हृदय इस जीवन निर्माता के प्रति गद्‌गद् हो गया।

स्वामी शंकराचार्य दिल्ली आए और परेड के मैदान में उनके भाषण हुए। भारी उपस्थिति होती थी। ला० चतुरसेन जी ने वेदों के पौराणिक मत से किए गए भाष्यों के आधार पर बड़ी निर्भयता से युक्तिसंगत कुछ प्रश्न किए। शंकराचार्य जी से कोई उत्तर न बन पड़ा। इन दिनों चतुरसेन जी दरीबाकलां में पुस्तकों की दूकान करते थे। उनकी दूकान पर आर्य समाज और सनातन धर्म के विद्वानों का जमघट लगा रहता था। खूब धार्मिक चर्चा होती रहती। उन्हीं दिनों "वर्णाश्रम स्वराज्य संघ" की ओर से एक विशेष सम्मेलन जहां इस समय दीवान हाल आर्यसमाज है—उस समय यह समाज मन्दिर नहीं था—के पास खाली मैदान में जिसे अब "बीस्सोमल कालोनी" कहा जाता है—वहाँ हुआ। बनारस के लक्ष्मण द्रविड शास्त्री इसके अध्यक्ष थे।

"वर्णाश्रम स्वराज्य संघ" में शास्त्रार्थ की चुनौती

"वर्णाश्रम स्वराज्य संघ" के इस महासम्मेलन में चारों धाम के शंकराचार्य और लगभग २०० संस्कृत के विद्वान् उपस्थित थे जिनमें उल्लेखनीय महामहोपाध्याय पं० गिरधर शर्मा चतुर्वेदी, पं० ब्रह्मदत्त शास्त्री आगरा वाले, पं० अखिलानन्द शास्त्री कविरत्न इत्यादि दिग्गज पौराणिक विद्वान् थे। उन दिनों "अछूतों को मन्दिर प्रवेश का अधिकार"—इस विषय को लेकर गांधी जी का आन्दोलन सारे भारत में चल रहा था। गाँधी जी पर मन्दिर प्रवेश के विरोधियों की ओर से राजस्थान में बम फेंका गया था। इस सम्मेलन में रात को पं० अखिलानन्द ने इस मन्दिर प्रवेश के विषय को लेकर शास्त्रार्थ का खुला आह्वान किया। उस समय ला० चतुरसेन जी, पं० विशम्बर दयाल जी के साथ मैं भी वहां उपस्थित था। चतुरसेन जी की प्रेरणा से आर्यसमाज, चावड़ी बाजार की ओर से शास्त्रार्थ का यह आह्वान स्वीकार कर लिया गया और घोषणा कर दी गई कि "कल प्रातः १० बजे इसी पण्डाल में शास्त्रार्थ होगा।"

आधी रात को पं० व्यासदेव जी की सेवा में

हम लोग तो पण्डित नहीं थे और अकस्मात्, पं० रामचन्द्र जी देहलवी और पं० देवेन्द्रनाथ जी शास्त्री—दोनों ही नगर से बाहर थे। हम लोग चावड़ी बाजार समाज में आकर आधी रात तक स्मृति दर्शन, पुराण इत्यादि से प्रमाण इकट्ठे करते रहे। पर सबसे बड़ी समस्या तो शास्त्रार्थ करने के लिए प्रगल्भ और शास्त्रार्थ निपुण विद्वान् की थी। हम लोग कुछ निराशा की स्थिति में थे कि उसी समय एक सज्जन वहाँ आए और उन्होंने बताया कि करोलबाग, रामजस कालेज में संस्कृत के प्राध्यापक एक उच्चकोटि के आर्य विद्वान् हैं, उनसे इस दायित्व को संभालने की प्रार्थना की जाए। इस विद्वान् का नाम पं० व्यासदेव शास्त्री, साहित्याचार्य, एम० ए० एल० एल० बी० था। हम लोग रात को करीब ९ बजे उनके द्वार पर पहुँचे। पंडित जी से साक्षात्कार हुआ। और उन्होंने सहर्ष यह दायित्व पूर्ण कार्य स्वीकार किया।

पं० व्यासदेव जी से पौराणिकों में खलबली

दूसरे दिन ठीक प्रातः १० बजे पण्डाल जनता की भीड़ से खचाखच भरा था। मुलतान के संस्कृतज्ञ पं० यदुकुल मदान इस सभा के प्रधान थे। पं० व्यासदेव

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जी को आर्यसमाज की ओर से धारा प्रवाह संस्कृत बोलते देख पौराणिक मण्डली में खलबली मच गयी। सुयोग्य पण्डित जी ने पौराणिक ग्रंथों में से ही हरिजन मन्दिर प्रवेश को सिद्ध कर दिया। सनातनी पण्डित ब्रह्मदत्त शर्मा निरुत्तर हो गए।

तब पौराणिक पक्ष की ओर से एक नई चाल चली गई और संस्कृत में ही भाषण करने की चुनौती दी गई। यह भी कहा गया कि जो संस्कृत बोली जाए वह किसी ग्रंथ की घोटी-घुटाई न हो किन्तु स्वयंकृत हो। यदि कोई किसी ग्रन्थ की संस्कृत बोलेगा तो उसकी हार मानी जाएगी। आर्य समाज के पण्डित व्यासदेव जी ने यह शर्त सहर्ष स्वीकार की। पहले सनातन धर्म के पण्डित ब्रह्मदत्त जी खड़े हुए। उन्होंने संस्कृत में भाषण प्रारम्भ किया। अभी वे पाँच मिनिट ही बोले थे कि आर्य विद्वान् पं० व्यासदेव जी ने खड़े हो आपत्ति की कि "यह तो शंकर की कारिकाएं बोली जा रही हैं, जो घोटी हुई हैं, रटा हुआ संस्कृत भाषण हो रहा है।" इस पर सारी सभा में हो-हल्ला मच गया। अन्त में निश्चय हुआ कि इसका निर्णय पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी ही करें। उनका निर्णय सर्वमान्य होगा।

"व्यासदेव" तुम सचमुच व्यास हो—गिरिधर शर्मा

अब चतुर्वेदी जी बड़े असमंजस में पड़ गए। वह तो सनातन धर्म के मूर्धन्य और मान्य पण्डित थे। अगर उनका निर्णय अपने ही पक्ष के विरुद्ध हुआ, तो बड़ी पेचीदा स्थिति होगी। पर, उनकी अन्तरात्मा सत्य को छिपा न सकी। उन्होंने निर्णय दिया कि पं० व्यासदेव जी की आपत्ति ठीक है। साथ ही उन्होंने व्यासदेव जी को सम्बोधित करते हुए कहा—

> "व्यासदेव ! तुम सचमुच ही महाभारत युग के व्यास हो। जब तुम १८ वर्ष के थे, मैं तुम्हारी प्रखर बुद्धि और योग्यता देख कर मुग्ध हो गया था। पर एक बात कहूँ, यदि पं० ब्रह्मदत्त ने शंकर की कारिकाएँ ही बोल दीं, तो इस से क्या हानि हुई ?

इस पर फिर जनता में हल्ला मच गया। लोगों ने चिल्ला कर कहा "हम पं० व्यासदेव जी के मुख से संस्कृत सुनना चाहते हैं।" इस पर पं० व्यासदेव जी ने एक घण्टे तक धारा प्रवाह सुन्दर ललित और सरस संस्कृत में भाषण दे उपस्थित जन समूह को मंत्र मुग्ध कर दिया।

ला० चतुरसेन की दुकान को आग लगा देना

इस पर कुछ पौराणिकों ने चिढ़कर ला० चतुरसेन जी की पुस्तकों की दुकान को आग लगा दी। शीघ्र ही आग पर काबू पा लिया और अधिक क्षति होने से बचा ली गयी।

उस दिन से पं० व्यासदेव जी का यश न केवल राजधानी में, किन्तु सर्वत्र फैल गया। उस समय से पंडित जी के नेतृत्व में, ला० चतुरसेन जी, श्री चन्द्रगुप्त वेदालंकार और मैं—हम सबकी घनिष्ठता बढ़ती गई और प्रतिदिन आर्य समाज के प्रचार की ठोस और सक्रिय योजनाएं बनने लगीं। इन सब योजनाओं में हमारे मार्ग दर्शक चतुरसेन जी ही थे।

इन्हीं दिनों एक महत्त्वपूर्ण घटना हुई जिसमें चतुरसेन जी के नेतृत्त्व और पं० व्यासदेव जी के सत्साहस और निर्भयता ने आर्य हिन्दू-जाति के आत्म-गौरव और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वर्चस्व को उज्जवल कर दिया।

शिव मन्दिर सत्याग्रह में : चतुरसेन जी का नेतृत्त्व

चांदनी चौक, घण्टाघर के पास एक छोटा शिव मन्दिर था। पुलिस इस में से शिव की पिण्डी उठा कर ले गई जिससे मन्दिर की पवित्रता खंडित हो गई और कुछ हिन्दुओं को पीटा भी। मैं प्रातः भ्रमण से जब वापस आ रहा था, तब वहां भीड़ देखकर रुक गया। एक सरदार जी कह रहे थे कि "यदि किसी गुरुद्वारे में पुलिस इस प्रकार का अनाचार करती तो वहाँ लाशें बिछ जातीं। पर यह हिन्दू हैं जो चुपचाप खड़े देख रहे हैं।" मैंने तत्काल कहा—सरदार जी ! आप १२ बजे यहां आना आप देखेंगे कि यहां भी लाशें बिछी होंगी।" उसी समय आर्य अनाथालय पटौदी हाऊस में सन्देश भिजवाया गया। वहां से श्री हरिराम आजाद युवकों सहित वहाँ पहुँच गए। जहाँ से पुलिस शिव की पिण्डी उठा कर ले गयी थी, वहीं पर ओ३म् का झंडा गाड़ दिया गया। शिवमन्दिर सत्याग्रह आन्दोलन तीव्र गति से सारे नगर में चला जिसका नेतृत्त्व पं० व्यासदेव जी और ला० चतुरसेन जी कर रहे थे। मैं भी दिन रात लाला जी को सहयोग देता। उस समय चतुरसेन जी ने "सुन्दर लाल" के प्रच्छन्न नाम से इस आन्दोलन को सम्भाला। आखिर सरकार को झुकना पड़ा। सत्याग्रहियों के जत्थे छोड़ दिये गए और मन्दिर में पुनः मूर्ति का प्रतिष्ठान" ओ३म्" के ध्वज के पास ही किया गया।

आर्यसमाज के अन्य सत्याग्रहों में

इसके बाद लाला जी हैदराबाद आन्दोलन में जुट गए। दिल्ली तो सब सत्याग्रही जत्थों के यहां ठहरने और आगे जाने का मुख्य केन्द्र था। बड़ा विशाल कार्य था। लाला जी के साथ हम सब आर्य युवकों ने इस कार्य को संभाला। इसके बाद सिन्ध में "सत्यार्थ प्रकाश पर पाबन्दी" "गोरक्षा" "पंजाब का "हिन्दी आन्दोलन" इत्यादि सब हलचलों में चतुरसेन जी पूरी तन्मयता और उत्साह से भाग लेते, साथियों का मार्ग दर्शन करते और किसी प्रकार की ढील व सुस्ती न होने देते।

हिन्दी के सिद्धहस्त लेखक

लाला चतुरसेन जी जन आन्दोलन का नेतृत्व और मार्ग दर्शन करने के अतिरिक्त हिन्दी के चिन्तनशील और स्फूर्तिप्रद लेखक भी थे। आपने सबसे पहले "चाणक्य नीति" "समरांगण सूत्रधार" "सम्पूर्ण महाभारत" "दयानन्द दिग् विजय महाकाव्य" (पं० अखिलानन्द कृत संस्कृत में) इत्यादि ग्रंथों का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किए। उन्होंने "राष्ट्रपति के नाम ११ प्रश्न" एक पुस्तक लिख तत्कालीन भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद को भेजी थी। राष्ट्रपति ने आद्योपान्त पढ़ आश्वासन दिया था कि संसद् का ध्यान इधर आकृष्ट करूँगा। इसी प्रकार उन्होंने कई छोटी-छोटी पुस्तकें आर्य हिन्दुओं में जागृति पैदा करने के लिए लिखीं। उनकी एक पुस्तक "मैं हंसूं या रोऊँ" है जिसमें आज की कांग्रेस भी राष्ट्रघातक नीति और हिन्दुओं की बेसुधी पर उन्होंने अपने हृदय के गहरे सन्ताप और खेद को व्यक्त किया था।

हिन्दुओं की बेसुधी के लिए तीव्र अन्तर्वेदना

लाला जी के हृदय में एक बड़ी वेदना थी और वह सरकार द्वारा धर्मनिरपेक्षता का दम्भ करते हुए भी मुसलमानों को "अल्प-संख्यक" मानते हुए उन्हें प्रश्रय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

देना और सदा उनके प्रति तुष्टीकरण की नीति अपनाना। लाला जी के चित्त में जहां ऋषि दयानन्द के प्रति अगाध श्रद्धा थी, वैदिक धर्म के प्रति अपरिमित आस्था थी वहां उनके अन्तस्थल में हिन्दुओं की कुम्भकरणी निद्रा, अनेकता, जात-पांत, सामाजिक कुरीतियों दासता—इत्यादि दोषों के प्रति प्रबल ज्वाला और कुछ कर सकने और मर मिटने की भावना सदा प्रदीप्त रहती थी। उनके अत्यन्त सान्निध्य में रह कर मैंने देखा कि चतुरसेन जी का निजी जीवन पवित्र, शुद्ध, आर्य जीवन था और वह कट्टर आत्मविश्वासी तथा ईश्वर भक्त थे।

सार्वदेशिक सभा के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध

सार्वदेशिक सभा के साथ लाला जी का चिरकाल से घनिष्ठ सम्बन्ध था। वह इसके आजीवन सदस्य थे। पर उनमें कभी किसी प्रकार का पद लेने की लालसा नहीं थी। "सार्वदेशिक" पहले मासिक निकलता था। इसे साप्ताहिक रूप देना उन्हीं के परिश्रम, दूरदर्शिता और कार्य कुशलता के फलस्वरूप था।

पारिवारिक दृष्टि से लाला जी का सारा परिवार भरा-पूरा और आत्म संतुष्ट हैं। सब बच्चे अपने धन्धों में लगे और सुखी हैं।

मेरे प्रेरणा स्रोत थे

लाला राम गोपाल जी ने इस भेंट वार्ता को समाप्त करते हुए कहा "मेरे पास उनके अनेक अमूल्य और प्रेरणाप्रद संस्मरण हैं। पर उनका वर्णन किसी अन्य अवसर के लिए छोड़कर इतना ही बड़ी टीस और व्यथा के साथ कह सकता हूँ कि—

"मेरा मार्ग दर्शक और प्रेरणा स्रोत मुझ से सदा के लिए विदा हो गया। प्रभु उनकी आत्मा को सद्गति प्रदान करे।"

कागज़ ! कागज़ और कागज़ !

हमारी सबसे बड़ी समस्या बन गयी है कागज़—

क्या जन-ज्ञान के सदस्य अपनी पवित्र आय से
इस समस्या का हल नहीं कर सकते ?
कागज़ का प्रबंध करिए ताकि वेद और वैदिक साहित्य
निरंतर प्रकाशित होता रहे—

५) २५) ५१) १०१) ५०१) या १००१)
जैसी भी स्थिति हो : भेजकर प्रभु का काम पूरा करें।

—सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी हरिद्वार की
औषधियां सेवन करें

गुरुकुल कासारि

खांसी की अपूर्व गुणकारी औषधि

उपयोग—किसी भी कारण से हुई खांसी, नजला, जुकाम आदि से लाभदायक है।

सेवन विधि—दिन में तीन बार छोटी चम्मच लेकर उंगली से चाटें।

आंखों के अनेक रोगों के लिए
संसार प्रसिद्ध
भीमसेनी सुरमा

च्यवनप्राश
उत्तम स्वादिष्ट रसायन

शरीर को बलिष्ट एवं कान्तिमय बनाता है
शारीरिक क्षीणता एवं फेफड़ों के लिये प्रसिद्ध
आयुर्वेद रसायन

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी
पो० गुरुकुल कांगड़ी [सहारनपुर]
शाखा कार्यालय—चावड़ी बाजार, दिल्ली-६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद-भाष्य का मूल्य ३० अप्रैल से १२४) होगा या है।

जन-ज्ञान के जो सदस्य अभी तक भी वेद-भाष्य के सदस्य नहीं बने है उनके लिए विशेष रियायत : १०१) में केवल १०० सदस्य बनाने का निश्चय। शीघ्रता करें। १०० सदस्य पूर्ण होने पर धन स्वीकार नहीं होगा। —सम्पादक

क्या आप अपने परिवार में प्रभु की अमर वाणी वेद नहीं लाएंगे ?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(प्रथम और अंतिम पृष्ठ का चित्र परिचय)

सरजा शिवाजी और जवाहरलाल नेहरू

११०० वर्ष पूर्व उस दिन आर्यजाति का सौभाग्य सूर्य अस्त हो गया था, जिस दिन सिंधु सरिता के तट पर हमारे महान् पराक्रमी पूर्वज सिंधु नरेश दाहिर पराजित हुए थे। काबुल के वैदिक धर्मी अधिपति त्रिलोचनपाल, पंजाब के महाराजा जयपाल तथा अनंगपाल तथा, दिल्लीपति सम्राट् पृथ्वीराज एवं कन्नौज नरेश जयचन्द, चित्तौड़ के शासक महाराणा सांगा, बंगाल के महाराज लक्ष्मणसेन, देवगिरि के राजा हरपाल, विजयनगर के सभी महाराजा एवं महारानियाँ तथा उनके राज-मुकुट एवं राजसिंहासन क्रमशः धूल-धूसरित होते गए। निर्भीक, धूर्त तथा अजेय शत्रु दल हिन्दू जाति की काँपती छाती पर अपने घुटने रखकर खड़े हो गए। चितौड़ ही क्या आर्यावर्त भर की हिन्दू राजधानियाँ जलकर क्षार-क्षार हो गईं। यदा-कदा इन्हीं राख की ढेरियों में से कुछ चिन्गारियाँ भी प्रज्वलित हुईं किन्तु वे क्षणभर चमकीं और फिर विलुप्त हो गईं और फिर आया वह दिवस कि जब सम्राट् औरंगजेब हिन्दुस्तान की सभी आशाओं को पदाक्रांत कर भारत की हृदयस्थली दिल्ली में अपने मयूरासन पर निश्चिन्त बैठा था और क्रोध से दग्ध उसके पैरों की ठोकर के इंगित मात्र से मृत्यु का ताण्डव नृत्य करने को तत्पर रहती थीं लाखों तलवारें।

उसी संक्रमण वेला में एक गुप्त गोष्ठी में एकत्रित हुई आर्य युवकों की एक टोली। अपने दिवंगत नरेशों और रानियों, धूल धूसरित हुए सिंहासनों एवं हिन्दू जाति के गौरव की राख की ढेरी को साक्षी कर उन्होंने स्वराष्ट्र के अपमान का प्रतिशोध लेने एवं वैदिकशास्त्रों एवं आर्य धर्म की स्वर्ण गैरिक पताका के सम्मान की रक्षार्थ, इस अजेय शत्रु के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करने की पावन प्रतिज्ञा ग्रहण की। जब हिन्दू युवकों की यह मदमाती टोली रणाँगण में अवतरित हुई लगभग सवातीन सौ वर्ष पूर्व) इसका नायक था सन् १६२७ में शाहजी भोंसले और माता जीजाबाई के कुलदीपक के रूप में जन्मा शिवाजी।

इन नवयुवकों की इस टोली के मस्तक पर थी रोली और हाथों में थी जंग लगी तलवारें। विश्व ने उसकी इस अवस्था को देखकर तिरस्कार सहित कहा 'यह मूर्खतापूर्ण पग है'; बुद्धिमान बोले 'यह आत्मघात का पथ है' और औरंगजेब के मुख से निकला 'तुम हो क्या ?'

इनमें से सभी के उपरोक्त अनुमान थे तो अनुभव सिद्ध ही। क्योंकि शिवाजी स्वराज्य की स्थापनार्थ सक्रिय हुए प्रथम विद्रोही तो थे नहीं। उनके पूर्व भी तो कई वीरों ने इसी पथ पर चलकर अपने प्राणों से हाथ धोए थे और बदले में उन्हें मिली थी असफलता। किन्तु शीश हथेली पर धर कर प्रतिशोध लेने की प्रतिज्ञा की थी इन दीवानों ने। उनका यह दुर्दम्य विश्वास था कि यदि इस पथ पर चलकर हम असफल रहे और स्वातन्त्र्य देवी के श्रीचरणों में हमारे मस्तक चढ़ भी गए तो भी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation Chennai
हम अपना रक्तदान देकर मातृभूमि के पुनरुत्थान की ऐसा बाजारीपण कर जाएंगे कि भावी पीढ़ियाँ भी स्वदेश में स्वराज्य की स्थापनार्थ अग्रगामी होंगी और दासता की शृंखला एक न एक दिन चटख कर तार-तार हो जाएगी।

और फिर २० वर्ष पश्चात्। नौरंग औरंग के चेहरे का रंग उड़ गया, उसकी वाणी का गर्जन साथ छोड़ गया। महाराष्ट्र में शिवाजी के नेतृत्व में संगठित हुई यह वीरों की टोली ही बन गई स्वराज्य की हृदयस्थली। औरंगजेब एक बार पुनः पूरा जोर लगाकर चीखा "मैं काफिरों की इस टोली को नेस्तनाबूद कर दूंगा।" औरंगजेब सहस्रों तलवारों के साए में शिवाजी के शिशु राज्य पर चढ़ दौड़ा। उसने उस प्रदेश को पददलित तो कर दिया किन्तु दमन से भभक उठा विद्रोह का ऐसा भयंकर विस्फोट कि जिससे शक्तिशाली मुगल सिंहासन भी प्रकम्पित हो उठा। अब वह न तो स्थिर रह सकता था और न ही बचाव कर सकता था। इस विस्फोट से फटी धरती से औरंगजेब अपने निकलने का जितना प्रयास करता था, उतना ही उसमें धंसता जाता था। अन्ततः वह ऐसा धँसा और फँसा कि फिर उसे उबरने का दिन देखना ही नसीब न हो पाया। वह तो दम तोड़ ही गया उसकी लाखों चमकती तलवारों की धार भी कुण्ठित हो गई और उबर थे वीर हिन्दू युवक, जिन्होंने औरंगजेब के शाही मजार के समीप खड़ा कर दिया विशाल स्वराज्य का भव्य द्वार। यह राज्य था धर्म सापेक्ष और इसके संस्थापक की कल्पना थी अखंड भारत में स्वतन्त्र और प्रभुत्ता सम्पन्न हिन्दू (आर्य) राष्ट्र का निर्माण। हिन्दवी स्वराज्य की आसेतु हिमाचल सारे देश में संस्थापना।

आज से लगभग ३०० वर्ष पूर्व छत्रपति शिवाजी के राज्याभिषेक के शुभ अवसर पर आह्लाद व्यक्त करते हुए उस समय के महान आर्य संन्यासी समर्थ रामदास स्वामी ने भी की थी यह घोषणा 'जिस स्वप्न को मैंने अर्धरात्रिमें देखा था वह अक्षरशः सित्य सिद्ध हुआ। अर्थात् भारतवर्ष की निद्रा भंग हो गई और लोगों ने अपने आप को पहचानना प्रारम्भ कर दिया है। जो भारत से घृणा करते थे तथा ईश्वर के प्रति अपराध करते थे, उन्हें सुदृढ़ हाथों से कुचल दिया गया वस्तुतः आर्यावर्त पावन और भाग्यवान् देश है, क्योंकि भारत के ध्येय को ही प्रभु ने अपने ध्येय के रूप में स्वीकार कर लिया है। इसलिए औरंगजेब का पतन अवश्य होगा। जो लोग सिंहासनासीन थे वे सिंहासनच्युत हो गए तथा जो किसी समय राज्य सिंहासन से उतार दिए गए थे, वे उस पर पुनः सुशोभित हो गए। मानव का श्रेय शब्दों की अपेक्षा उसके क्रियाकलापों से ही उजागर होता है। वस्तुतः भारतभूमि एक पुण्य क्षेत्र है, इसके धर्म की रक्षा का कार्य अब राज-धर्म द्वारा सम्पन्न होगा। अब राक्षसी सत्ता द्वारा देश का पावन जल अपवित्र नहीं होता रहेगा और हम एक बार पुनः इस पुण्यभूमि में यज्ञ पूजनादि कार्य सम्पन्न करने का सौभाग्य प्रभृत कर सकेंगे।'

१६२७ ई० में जन्मे सिंह सपूत शिवाजी की जननी जीजाबाई ने बाल्यावस्था में ही उन्हें मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम, योगेश्वर श्रीकृष्ण, धनुर्धर अर्जुन, महाकवि भीम, बालवीर अभिमन्यु तथा सत्यवादी हरिश्चन्द्र की सत्कीर्ति से परिपूर्ण प्रेरणाप्रद गाथाएँ सुना सुनाकर उनका हृदय महान हिन्दू जाति के विगत गौरव से परिपूर्ण कर उनके मन में यह वीर भाव सरसया था कि 'आर्य कभी दासता स्वीकार नहीं करता।' अतएव बाल्यावस्था से ही उनके हृदयपटल पर उत्साह, शौर्य और आशा के सघन घन उमड़ने घुमड़ने लगे थे।

क्षणिक सुखों की प्रभृति हेतु अपनी पावन आत्मा को विदेशियों के हाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नीलाम चढ़ाकर जीवन को दासता के कलंकित बन्धनों में जकड़ने एवं खिलौनामात्र बनाने के लिए शिवाजी कदापि तैयार न हुए। उन्होंने उन विदेशियों की चरण वन्दना कर भौतिक सुखों का अभिनन्दन करने को कदापि श्रेयस्कर न माना जिन्होंने राज्य सिंहासन को खंड खंड कर इस देश की अस्मिता के विखंडन को ही अपना लक्ष्य घोषित कर रखा था। इसके विपरीत उनके अन्तरतम में अपना सर्वस्व समर्पित करके भी अपने पूर्वजों की गौरव गरिमा की रक्षा करने की महान् जिगीषु भावनाओं ने हिलोरें ली थी। अपने इस पावन उद्देश्य की पूर्ति हेतु कठिनाइयों के पर्वतों से टकरायी भी उन्हें खेल सा लगा। समय आने पर वैदिव धर्म के पुनरुद्धारार्थ अपना जीवन प्रसून समर्पित कर देने की महान् आकांक्षा से ही उनका हृदय सदैव आंदोलित होता रहा। उन्होंने एक ही संकल्प अपने अन्तरतम में संजोया कि यदि रणभूमि में विजयलक्ष्मी ने उनके चरण पखारे तो वह एक न एक दिन महान पराक्रमी विक्रमादित्य तथा शालिवाहन के समान ही गौरवशाली स्वराज्य की सस्थापना करेंगे जो हिन्दू जाति के सुख स्वप्नों को वास्तविक रूप प्रदान करेगा तथा जिससे ऋषि मुनियों की अभिलाषित प्रार्थनाएँ भी पूर्ण हो सकेंगी।"

शिवाजी द्वारा संस्थापित यह स्वराज्य बढ़ा और फलाफूला किन्तु फिर भाग्य चक्र ने पलटा खाया और १७९५ ई० से लेकर १८१८ ई० तक के कालखंड में महाराष्ट्र में फहरी स्वधर्म और स्वराज्य की पताका तिरोहित होती गई। शताब्दियों तक एक विदेशी सत्ता के विरुद्ध हुए संघर्ष के उपरान्त महाराष्ट्र के आर्य वीर भी थककर विश्राम की तैयारी में संलग्न हो उठे और उसी घड़ी में एक अन्य बलिष्ठतम शत्रु (अंग्रेज) जो पहले दो बार उनसे मुँहकी खा चुका था, अपनी दुर्दम्य शक्ति सहित उन पर टूट पड़ा। वे उस समय भी इस शत्रु को धकेल सकते थे किन्तु नाना साहब पेशवा के उपरांत उनके स्थान पर आ गया था बाजीराव द्वितीय। स्वार्थ का सजीव पुतला। मराठे परास्त हो गए और बन गई इस आर्य साम्राज्य की समाधि।

शिवाजी द्वारा संस्थापित स्वराज्य की समाधि तो बन गई किन्तु उनके द्वारा प्रदीप्त स्वातन्त्र्य की पावन ज्योति आगामी पीढ़ियों को भी राह दिखाती रही। इसी मई मास में १८५७ ई० में अंग्रेजी राज्यसत्ता के विरुद्ध हुए महान् क्रान्ति समर में उनका स्वराज्य और स्वधर्म की संस्थापना का उद्घोष गूंजा तो आर्यसमाज की पावन वेदी पर बैठकर स्वराज्य की संस्थापना की सत्संकल्प ग्रहण करने वाले श्यामजी कृष्ण वर्मा ने भी शिवाजी छात्रवृत्ति प्रदान कर शिवाजी के अमर अनुगामी वीर विनायक दामोदर सावरकर को लन्दन में उच्च शिक्षा हेतु बुलाया। यह महान् राष्ट्रभक्त स्वातन्त्र्य वीर भी इसी मई मास (२८ मई) में महाराष्ट्र के एक ग्राम भगूर में सन् १८८३ ई० में जन्मा था।

स्वदेश की स्वतन्त्रता के पावन अपराध में दो जन्मों का कारावास पाने वाला यह स्वदेशाभिमानी अंडमान की काल कोठरियों में १३ वर्ष तक यमयातनाएँ झेलने के उपरान्त भारत आ पाया था किन्तु यहाँ भी उसे अलीपुर और रत्नागिरी तथा यरवदा आदि के कारागारों में कारावरण करना पड़ा और १९२४ में मिली उन्हें जेल से रिहाई किन्तु साथ ही शिवाजी का यह महान् पुजारी, हिन्दू पदपादशाही की गौरव गाथा का गायक हिन्दुत्व का उन्नायक रत्नागिरी में ही १९३७ तक स्थानबद्ध रहा। और इसी मई मास में (१० मई १९३७ को) मिली थी, उसे रिहाई। तदुपरान्त भी वह आर्य जाति के गत गौरव के पुनरुद्धार हेतु हिन्दू संगठन और शुद्धि तथा राजनीति को शिवाजी प्रणीत स्वरूप प्रदान करने के लिए हिन्दू

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महासभा के मंच से जीवन की अंतिम घड़ी तक सक्रिय रहा।

वह आजीवन अजेय वीर की तरह जिया और अजेय वीर की तरह ही मरा। शिवाजी के समान ही वह भी देशभक्ति के उसी साँचे में ढला था जो वज्र का होता है। अंतिम क्षणों तक भी उनका वज्र संकल्प अपने शौर्याग्रह में अटल और अविचल ही रहा। अंग्रेजों ने अपनी "विभाजन और शासन" की जिस नीति से देश को बीसियों भागों में बाँट दिया था, वीर सावरकर ने उसे राष्ट्र का निर्धारित व्यक्तित्व स्वीकार्य न कर अखंड भारत राष्ट्र के सनातन अस्तित्व को ही सर्वोपरि महत्त्व दिया। मृत्यु पर्यन्त उनका यही अक्षुण्ण विश्वास रहा कि देश में जो विभक्तियाँ प्रचारित हैं, वे कृत्रिम हैं एवं देश को विघटित करने के लिए ऊपर से थोपी गई हैं। उन्होंने इसी वैदिक सत्य को स्वीकार किया था कि अंतराल में देश की अविभक्त संस्कृति का मूल वस्तुतः एक ही है। देशभक्ति के स्वसिद्धान्त पर वह आजीवन शार्दूल की तरह निःशंक और निर्भीक आचरण करते रहे। हुतात्मा संकल्प में ढला यह योद्धा २६ फरवरी १९६६ को अपना जीवनदीप भारतमाता की आरती के थाल में संजो गया।

यह मई मास ही एक और महापुरुष की स्मृति भी सहसा ही मानसपटल पर उभारता है। वह महान् मानव थे पं० जवाहरलाल नेहरू। १४ नवम्बर १८८९ को देश के सुप्रसिद्ध नेता श्री मोतीलाल नेहरू के कुलदीपक के रूप में जन्मा यह राष्ट्र-भक्त २७ मई, १९६४ को चिर विदाई ले गया। अनंत वायु को सुयश सौरभ का दान देकर गुलाब का यह अमर प्रेमी स्वतः फूल के समान अपनी टहनी से झड़ गया।

स्वदेश की स्वतन्त्रता हेतु वैभव और संपन्नता को ठुकराने वाले "विश्व इतिहास की झलक" प्रस्तुत करने वाले इस महान देशभक्त ने अपनी कल्पना और निष्ठा के अनुसार स्वदेश की सेवा की। कारागार की काली कोठरियों में उसने यातनाएँ झेलीं तो प्रचंड जन आंदोलनों का भी उसने सफल नेतृत्व किया। वह अपनी मान्यता के अनुसार देश में समाजवादी समाज रचना और भौतिक समृद्धि लाने के लिए तत्पर रहे। १९४७ के अगस्त मास से अपने जीवन की अंतिम घड़ी तक वह इस देश के प्रधानमंत्री रहे। धर्म निरपेक्षता में उन्होंने अपनी आस्था रखी और मार्क्सवादी दर्शन ने भी उन्हें प्रेरणा दी किन्तु इसके साथ ही छत्रपति शिवाजी और अन्य भारतीय महापुरुष भी उनके जीवन को प्रभावित किए बिना न रह सके।

उनके जीवन में भी उनके निधन से लगभग ५ वर्ष पूर्व एक ऐसा अवसर आया जब वह भौसलों की राजधानी रहे नागपुर में छत्रपति शिवाजी के श्री चरणों में श्रद्धांजलि समर्पित करने के लिए उपस्थित हुए। उस दिन उन्होंने शिवाजी को "भारतीय एकता एवं स्वातन्त्र्य युद्ध की कुशलनेता" घोषित किया।

एक सौभाग्यशाली क्षण था वह भारतीय इतिहास की जब धर्म निरपेक्ष प्रधानमंत्री ने 'धर्म सापेक्ष' शिवाजी के गुणगान में रत होकर इतिहास के एक महान् सत्य को अपनी वाणी से प्रतिध्वनित किया था। एक अहिंसक क्रांतिकारी ने सशस्त्र क्रांतिदूत के प्रति श्रद्धा ज्ञापन किया था। अपने इसी भाषण में इस महान् राष्ट्रभक्त ने "शिवाजी के आदेश" पर चलने का प्रेरणा भी दी थी।

किन्तु यह भी एक ऐतिहासिक सत्य है कि यदि पं० जवाहरलाल जी छत्रपति शिवाजी के जीवन के महान् आदर्श अर्थात् अखंड भारत में स्वराज्य संस्थापना के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सिद्धान्त पर अडिग रहते तो भारत का आज का इतिहास किसी और ही ढंग से लिखा जाता। यदि 'शठे शाठ्यं समाचरेत' की शिवा संजीवनी का पान कर यह युग पुरुष अपनी राजनीति की दिशा निर्धारित करता तो शायद देश के समक्ष आज विद्यमान अनेक समस्याओं में से कई का अस्तित्व भी न होता। किन्तु इन सब तथ्यों के बावजूद यह एक अकाट्य सत्य है कि 'विश्व इतिहास की झलक' देखने और विदेशों की अनेक विचारधाराओं से प्रभावित होने के बावजूद भारतमाता का यह महान पुत्र, स्वतन्त्रता के राजमुकुट का यह 'जवाहर' स्वदेश की संस्कृति और भारत भूमि की पावन माटी, अपने क्रियाकलापों की इस घाटी और स्वदेश के कण कण को ही स्वर्ग-तुल्य मानने की परिपाटी का पुरस्कर्त्ता था। इसीलिए तो उसने अपनी वसीयत में जहाँ यह उद्घोष किया कि 'इस तरह के अनुष्ठानों में मेरी कोई आस्था नहीं है और इसी तौर पर उन्हें झेलना पाखंड होगा और यह अपने लोगों को और दूसरों को धोखे में डालने का एक प्रयास होगा' वहाँ यह भी लिखा कि "मैं चाहता हूँ कि मेरे मरने के बाद मेरा दाह संस्कार हो। अगर मैं विदेश मे मरूँ तो वहीं मेरा दाह संस्कार किया जाए, पर मेरी अस्थियाँ इलाहाबाद लाई जाएँ। इनमें से मुट्ठी भर गंगा में प्रवाहित की जाएँ....."

इतना ही नहीं अपितु इसी वसीयत में गंगा के प्रति उसकी अडिग निष्ठा भी इन शब्दों में उभर उठी "गंगा विशेषकर भारत की वह नदी है, जिसे जनता प्यार करती है और जिसके इर्द-गिर्द उसकी जातीय स्मृतियाँ, उसकी आशाएँ और आशंकाएँ, उसके विजयगीत, उसकी विजय और पराजय का तानाबाना जुड़ा हुआ है। गंगा हमारी युग-युग पुरानी सभ्यता व संस्कृति का प्रतीक रही है, हर समय बदलती और हर समय बहती हुई। फिर भी यह वही गंगा है।

वह भावी भारत को विश्व के एक आधुनिकतम राष्ट्र के रूप में खड़ा करने के आकांक्षी थे किन्तु अतीत से कट कर अपना सब कुछ हेय और अन्यों का सभी कुछ ग्रहणीय की भावना उनमें कदापि उद्भूत न हो पाई थी। इसीलिए तो अपने वसीयत नामे में उन्होंने अंकित किये थे ये शब्द कि "यद्यपि मैंने अतीत की बहुत सी परम्पराओं का और प्रथाओं का वर्जन किया है और मैं चाहता हूँ कि भारत उन सभी जंजीरों से, जिन्होंने उसे कस रखा है और जो उसेसंकुचित करती हैं, उसका जनता में अलगाव पैदा करती हैं, और उनमें से बहुत बड़ी संख्या कि दमन करती हैं और देह व मन के मुक्त विकास में बाधा खड़ी करती हैं, छुटकारा हासिल कर ले। यद्यपि मैं यह सब चाहता हूँ, फिर भी अपने को अतीत से पूरी तरह काटकर अलग कर देना नहीं चाहता। उस महान् विरासत व परम्परापर जो हमारी है, मुझे गर्व है। मैं इस बात के प्रति भी जागरूक हूँ कि मैं भी हम सभी की तरह उस अटूट शृंखला की एक कड़ी हूँ, जो इतिहास के ऊषाकाल से युगों-युगों से चली आ रही है। मैं इस शृंखला को तोड़ना नहीं चाहूँगा, क्योंकि मैं इसे धरोहर मानता हूँ और इससे प्रेरणा प्राप्त करता हूँ।....."

आज आवश्यकता है इस बात की कि प्रत्येक राष्ट्र-भक्त छत्रपति शिवाजी के समान स्वातन्त्र्य साधना, स्वातन्त्र्य वीर सावरकर के तुल्य राष्ट्रभक्ति एवं पंडित नेहरू सरीखी सुखद विश्व की संरचना के सुख स्वप्न को अपने अन्तःस्थल में स्थान प्रदान स्वदेश, स्वराज्य व स्वधर्म तथा संस्कृति तथा परम्पराओं के प्रति समर्पण के भाव जगाए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

खोजपूर्ण वैदिक साहित्य

१. **वेदों का यथार्थ स्वरूप–**
पं० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड की एक सशक्त रचना, जिसे पढ़ कर 'वेद' के प्रति श्रद्धा उभरनी आवश्यक है। सभी संशयों का प्रभावपूर्ण समाधान। सजिल्द मूल्य ८)

२. **संक्षिप्त महाभारत**
महाभारत का यह लघु संस्करण स्व० महात्मा हंसराज जी ने प्रकाशित कराया था। अब पुनः प्रस्तुत है, कपड़े की बढ़िया जिल्द में। मूल्य ६)
मूल्य ३)

३. **ज्योति – स्तम्भ**
१२ शीर्षस्थ आर्यसमाज के नेताओं के जीवन चरित्र। १२ आर्ट पेपर पर चित्रों सहित।

४. **बोध – रात्रि [महाकाव्य]** मूल्य ३)
ऋषि दयानन्द का यह अनुपम काव्यमय जीवन चरित्र बर्मा में लिखा गया था। अपने ढंग का अनूठा ग्रन्थ है। मूल्य ३)

५. **आर्य क्रान्तिकारी लेखक श्री बनारसीसिंह**
जिन वीरों ने वैदिक सिद्धान्तों से प्रेरणा लेकर अपने जीवन को राष्ट्रहित के लिए आहुतिदी, उनकी अनुपम गौरव गाथा मूल्य ३)

नए अपूर्व महान् प्रकाशन

१—शतपथ ब्राह्मण (प्रथम कांड)

शतपथ ब्राह्मण का यह अपूर्व भाष्य स्वर्गीय स्वामी समर्पणानन्द जी महाराज की जीवन भर की साधना का सुपरिणाम है। ४०० से अधिक पृष्ठों का यह ग्रंथ अपनी उपमा आप है। बढ़िया कपड़े की जिल्द के इस ग्रंथ का मूल्य है। १५)

२—यजुर्वेद—सामवेद भाष्य

यजुर्वेद का भाष्य महर्षि दयानन्द कृत और सामवेद भाष्य आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री कृत एक ही सुनहरी जिल्द में प्रकाशित किया गया है। लागत मूल्य ४१)

३—ऋग्वेद (६ मण्डल) महर्षि दयानन्द कृत भाषा भाष्य मूल्य १५)

४–यजुर्वेद भाष्य) गत्ते की जिल्द १४) कपड़े की सुनहरी जिल्द १८)

पता—दयानन्द संस्थान नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

लेखक—रामशरण गुप्त 'शरण'

नियमों का पालन

नियम पांच माने गये हैं—शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान (यो० सू० २।३२)। शौच का अर्थ है पवित्रता—शरीर की, मन की और घर, नगर आदि की भी। शरीर की पवित्रता के लिए पश्चिमी शास्त्रों में भी बहुत कुछ वर्णन है, परन्तु वहाँ की बहुतसी बातें पूर्व के निवासियों के लिये हितकारी नहीं हैं। उदाहरण के लिए पूर्व का दन्तधावन (दतौन) पश्चिम के ब्रुशब्रुश से लाख दर्जे अधिक उपयोगी है। इसी प्रकार स्नान आदि अनेक बातों में भी पूर्व के निवासियों को अपने शास्त्र की विधि के अनुसार कार्य करने में ही अधिक लाभ और सुविधा है। पश्चिम का अनुकरण करना हानिकारक है।

परन्तु एक विशेष बात है कि शरीर की, घर की और नगर की शुद्धता के लिये तो पश्चिम के निवासी कुछ उपाय करते भी हैं; परन्तु आन्तरिक शुद्धता—मन की सफाई—के लिये वे कुछ भी उपाय नहीं बताते। पातंजलि भगवान् ने मन की शुद्धता के लिये भी परमोत्तम उपाय बता दिया है, जिसको काम में लाने से प्रत्येक मनुष्य का परमोत्तम कल्याण हो सकता है :—

मैत्री करुणा मुदितोपेक्षाणां सुख दुःख पुण्याऽपुण्य विषयाणां
भावनातः चित्तप्रसादनम् ॥ (पा० सू० १।३३)

अर्थात् जहाँ सुख हो उसके साथ मित्रता रक्खे, कभी किसी का सुख देखकर डाह और द्वेष न करो। जहाँ दुःख हो उसपर करुणा रक्खे, प्रत्येक दुःखमय प्राणी के साथ दया का बर्ताव करे। पुण्य करनेवाले प्राणियों को देखकर सदा ही मुदित (प्रसन्न) होवे और अपुण्य अर्थात् पाप करनेवाले प्राणियों के प्रति उपेक्षा (उदासीनता) का बर्ताव करे; तो ऐसी भावना रखने से चित्त का प्रसादन (शौच) हो जाता है।

देखिये, चित्त को शुद्ध रखने का कितना उत्तम उपाय बताया गया है। अन्तिम बात बहुत ही ध्यान से विचारनी चाहिये। पापी से कभी-कभी घृणा हो जाती है, परन्तु ऐसा नहीं होना चाहिये। हाँ, उसकी उपेक्षा करनी चाहिये। उसकी ओर ध्यान ही न दो; परन्तु पापी बहुत करके दुःख उठावेगा, इसलिये उसके प्रति करुणा करना हमारा कर्तव्य हो जाता है। पापी से बदला लेने की या उसको दण्ड देने दिलाने की तो इस सिद्धान्त में आवश्यकता रहती ही नहीं। कारण यह कि दण्ड देना हमारा काम नहीं, यह उस जगन्नियन्ता प्रभु का कार्य है।

इस प्रकार चित्त और शरीर को शुद्ध रखनेवाले मनुष्य दूसरे नियम सन्तोष का पालन तो अपने आपही करने लगेंगे। धर्माचरण करते हुए जो कुछ परमात्मा की कृपा से प्राप्त हो उसी को अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिये काम में लाना और जो कुछ भी अपनी आवश्यकता से अधिक हो वह धर्म पूर्वक मिला हुआ भी दूसरों का

 Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai
समझना; यह सन्तोष का अर्थ है। इस विषय में यजुर्वेद का एक बड़ा ही सुन्दर और परम प्रसिद्ध मन्त्र स्मरण रखना चाहिये—

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किं च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्य स्विद्धनम्॥

(यजुः ४०।१)

जो कुछ इस चलायमान जगत् में है वह सभी परमेश्वर से बसा हुआ—व्याप्त है। उस परमेश्वर से जो कुछ तुम को मिले उसे ही तुम भोगो। किसी भी दूसरे के धन को कभी ग्रहण मत करो।

कितना सुन्दर उपदेश है। परमात्मा को जो व्यापक समझेगा वह अन्याय पूर्वक किसी वस्तु को कभी ग्रहण कर ही नहीं सकता। यही सन्तोष है।

अब इन यम नियमों के पूर्णतया पालन करनेवाले को जो कुछ लाभ होता है उसकी चर्चा करते हैं।

अहिंसा प्रतिष्ठायां तत्सन्निधौ वैर त्यागः। (यो० द० २।३५)

जिसके चित्त में अहिंसा की प्रतिष्ठा पूर्ण स्थिति हो जाती है उसके समीप पहुँचने पर सभी प्राणी वैर का त्याग कर देते हैं अर्थात् सच्चे अहिंसक के समीप कोई वैर भाव रख ही नहीं सकता; इसीलिये हम अपने ग्रंथों में ऐसे उदाहरण पाते हैं कि तपस्वी ऋषियों के आश्रमों में सिंह और हिरण एकत्र क्रीड़ा करते हैं और कोई किसी को सताने का विचार भी नहीं करता। सच्चे अहिंसक महात्मा से तो कोई द्वेष कर ही कैसे सकता है? जबकि उनके निकट जाते ही साधारण विरोधी जीव भी—सर्प नकुल, मूषक मार्जार आदि—अपने स्वाभाविक वैर का परित्याग कर देते है।

सत्य प्रतिष्ठायां क्रिया फलाऽश्रयत्वम्। (२।३६)

सत्य की प्रतिष्ठा हो जाने पर प्रत्येक कार्य को फल का आश्रय अवश्य मिल जाता है। सत्याचरण करनेवाले के प्रत्येक कार्य का मनोवांछित फल अवश्य प्राप्त हो जाता है। सत्यवक्ता के मुख से कोई भी ऐसी बात नहीं निकल सकती जिसका फल उसके अनुसार न हो। वह किसी से 'राजा' कह देगा तो वह अवश्य 'राजा' ही होगा इत्यादि। सत्यवादी का वचन और कार्य कभी असत्य प्रमाणित नहीं हो सकता।

अस्तेय प्रतिष्ठायां सर्व रत्नोपस्थानम्॥ (२।३७)

चोरी न करने की दृढ़ धारणा हो जाने पर सभी रत्न धन अपने आप उपस्थित हो जाते हैं अर्थात् सच्चे अस्तेय सेवी को कभी किसी वस्तु की कमी नहीं रहती।

ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्यलाभः। (२।३८)

ब्रह्मचर्य का पालन करने से अनन्त सामर्थ्य की प्राप्ति होती है। लक्ष्मण, हनुमान् और भीष्म पितामह उत्तरोत्तर ब्रह्मचर्य की सामर्थ्य के उदाहरण रूप से उपस्थित किये जा सकते हैं। उनके बल और तेज का वर्णन करना आवश्यक नहीं, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य उनके अतुल बल को जानता है।

अपरिग्रह स्थैर्ये जन्म कथन्ता संबोधः (२।३९)

अपरिग्रह के व्रत की पूर्ण स्थिति हो जाने पर इस बात का ठीक-ठीक ज्ञान

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हो जाता है कि हमारे भूत, वर्तमान और भविष्य जन्म किस प्रकार के थे, हैं, या होंगे। इस प्रकार सभी जन्मों का ज्ञान हो जाना बड़ी कठिन बात जान पड़ती है; परन्तु इस बात को हम नहीं सोचते कि अपरिग्रह का व्रत भी कितना कठिन और महान् है। महान् व्रत को पालन करने से तो महान् ही फल मिलेगा। अतएव सच्चे अपरिग्रही को तीनों प्रकार के जन्मों का पूर्ण ज्ञान हो जाना वास्तव में कुछ भी कठिन नहीं है।

शौचात्स्वांगजुगुप्सा परैरसंसर्गः (२।४०)

शौच व्रत का यथेष्ट पालन करने से अपने अंग के प्रति भी घृणा उत्पन्न हो जाती है और इस प्रकार शौच ही से सहज में वैराग्य की उत्पत्ति हो जाती है। फिर "परैरसंसर्गः" अर्थात् शौच पालन करना वास्तव में दूसरों के संग से भी अनिच्छा उत्पन्न कर देता है। अतएव 'शौच' का वास्तविक पालन अपने और दूसरों के शरीरों का मोह छुड़ा देता है और हमें इस मोह जाल से हटाकर ईश्वर उपासना में लीन कर देता है।

सन्तोषादनुत्तमःसुखलाभः (२।४२)

सन्तोष प्राप्त हो जाने से ऐसा सुख मिलता है जिससे उत्तम संसार का कोई सुख होता ही नहीं। एक कवि ने कहा है "नहिं धन धन है परम धन, तोषहि कहहिं प्रवीन।" अर्थात् सबसे बड़ा धन (जिससे सब सुखों की प्राप्ति होती है) सन्तोष ही है, इसके सामने और कोई भी धन धन नहीं कहा जा सकता। यह चतुरों की बात है, मूर्ख लोग तो कभी सन्तोष करते नहीं।

कायेन्द्रिय सिद्धिरशुद्धिक्षयात्तपसः। (२।४३)

तप से सब प्रकार की अशुद्धि का नाश हो जाता है और शरीर तथा इन्द्रियों की सिद्धि प्राप्त हो जाती है अर्थात् तप के बल से मनुष्य शरीर की आठ प्रकार की सिद्धियाँ और दशों इन्द्रियों की चमत्कारिक सिद्धियें—जैसे बहुत दूर की वस्तु देख लेना, दूर का शब्द सुन लेना आदि—प्राप्त कर लेता है।

समाधिसिद्धिरीश्वर प्रणिधानात् (२।४५)

और ईश्वर प्रणिधान से समाधि की सिद्धि हो जाती है। जिस समाधि के लिये अर्थात् मन और बुद्धि की एकाग्रता के लिये योगी लोग व्याकुल रहते हैं वही समाधि 'ईश्वर प्रणिधान' के नियम का पूर्ण पालन करने से सहज में व्याप्त हो जाती है।

मनुष्य को जीवन का पूरा लाभ उठाने के लिए,
यम-नियम का पूर्णतया पालन करना चाहिए।

जब तक साथ एक भी दम हो, हो अवशिष्ट एक भी धड़कन।
रखो आत्म गौरव से ऊँची पलकें, ऊँचा सिर-ऊँचा मन॥

एक बूँद भी रक्त शेष हो, जब तक तन में हे मृत्युञ्जय!
दीन वचन मुख से न उचारो, मानो नहीं मृत्यु का भी भय॥

—रामनरेश त्रिपाठी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—स्वामी लक्ष्मणानन्दजी महाराज

ध्यान करने की सरल विधि

प्रत्येक मनुष्य सुख प्राप्ति के लिये अनेक कार्य करता है, तो भी दुःखों का अन्त नहीं देखता और सुख हिमालय की भाँति दूर दूर ही मालूम होता है। तब हताश होकर सुख मार्ग जानने को (तद्विज्ञानार्थं स गुरुमेवाधिगच्छेत्) गुरुजनों की शरण में जाता है; तब वेद ज्ञाता ज्ञानी अनुभवी उपदेश करते हैं भाई ! सुख स्वरूप आत्मा को जानने के लिये ईश्वर का ध्यान करो।

प्रायः देखा जाता है संसार के छोटे से छोटे काम को भी ठीक करने के लिये जब हम अपने मन में उस काम को ठीक समझ लेते हैं तभी उसको पूरा करने का साहस होता है। जब तक किसी काम को अच्छी तरह नहीं समझा जाता तब तक उस काम में हाथ लगाने को भी मन नहीं करता।

कुम्हार को जो भी कुछ बनाना होता है पहिले मन में जमाता है, तब बाहर घड़े आदि बनाता है। चित्रकार (पेंटर) पहिले अपने मन में जिस चित्र को अंकित करेगा उसी को बाहर कागज आदि पर अच्छी तरह से लिख सकेगा।

रेल, जहाज, मकान तथा दवाई आदि बनाने के पहिले मन में ठीक ठीक समझ लिये जाते हैं फिर बाहर की चीजों के योग से जल्दी तैयार कर लिया जाता है, परन्तु मन में समझने के लिये जितना बड़ा काम होगा उसे समझने में समय भी उतना ही अधिक लगेगा। इस समझने को ही अभ्यास कहते हैं। अभ्यास पक जाने पर ईश्वर ध्यान में सुगमता होती है अतः अभ्यास क्रम से उत्साहपूर्वक ध्यान दृढ़ होना चाहिये।

कठोपनिषद् में यमराज ने कहा है हे नचिकेता ! आत्मा ही रथी (रथ में बैठा हुआ जीव) है। शरीर रथ है। दस इन्द्रियाँ घोड़े हैं, इनके विषय ही रास्ते हैं। मन लगाम है और बुद्धि सारथी (रथ हाँकनेवाला) है।

विज्ञान सारथिर्यस्तु मनः प्रग्रहवान्नरः।
सोऽध्वनः पारमाप्नोति तद्विष्णोः परमं पदम् ॥

जिसकी बुद्धि ज्ञान वाली है, मनरूपी लगाम से इन्द्रियरूपी घोड़ों को वश में किये हुए हैं; सावधान है अर्थात् इन्द्रियों को "शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध" इन विषयों से रोकता है वह पुरुष (जीव) विष्णु के उस ऊँचे पद को प्राप्त होता है।

इन्द्रियेभ्यः परा ह्यर्था अर्थेभ्यश्च परं मनः।
मनसश्च परा बुद्धिर्बुद्धेरात्मा महान् परः॥

इन्द्रियों से परे (सूक्ष्म) विषय हैं, विषयों से सूक्ष्म मन है, मन से सूक्ष्म बुद्धि है और बुद्धि से भी महान् सूक्ष्म आत्मा है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महतः परम व्यक्तमव्यक्तात्पुरुषः परः।
पुरुषान्न परं किंचित् सा काष्ठा सा परा गतिः॥

इस महान् आत्मा से अव्यक्त श्रेष्ठ है, अव्यक्त से भी पर पुरुष परमात्मा सर्वश्रेष्ठ है। इस परमात्मा से परे और कुछ भी नहीं, यही सब जीवों की परमगति है।

एष सर्वेषु भूतेषु गूढोऽत्मा न प्रकाशते।
दृश्यते त्वग्रया बुद्धया सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः॥

आत्मा रूप से परमात्मा सब जीवों में छुपा हुआ है। स्थूल दृष्टि से मालूम नहीं होता, किन्तु सूक्ष्मदर्शियों द्वारा एकाग्र (ध्यान) बुद्धि से देखा जाता है।

ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मनः। गी० १३।२४

कोई पुरुष शुद्ध मन से शरीर में ही प्रकाश रूप आत्मा को देखते हैं।

ऋतं पिबन्तौ सुकृतस्य लोके गुहां प्रविष्टौ परमे परार्धे।
छाया तपो ब्रह्मविदो वदन्ति।

अपने किये हुए कर्म फल को भोगते हुए शरीर रूप लोक में परमोत्तम हृदयाकाश में बुद्धिरूप गुफा में प्रवेश किये हुए जीव और परमात्मा छाया और धूप की तरह स्थित है, ऐसा ब्रह्मवेत्ता कहते हैं।

ध्यान

प्रत्येक साधक प्रथम स्नान आदि से पवित्र भाव होकर एकान्त शुद्ध स्थान में आसन पर बैठ कर कम से कम तीन बार प्राणायाम करके चित्त की वृत्तियों को बाह्य पदार्थों से रोककर ब्रह्म में मन को दृढ़ता से स्थिर करे, मन और इन्द्रियों में बाह्य विषयों की भावना होती है; अतः बार बार विषयों को घृणा के भावों से देखने पर कुछ काल में मन आपही हट जाता है। शरीर को निश्चल करो। देह दशा को भूल जाओ। इस प्रकार ब्रह्म और आत्मा का सान्निध्य करके तन्मय भाव से अखंड प्रवृत्ति से मन ही मन आनन्द पूर्वक ब्रह्मानन्द रस का पान करो। ओंकार का जप करते रहो।

बार-बार विचार करो कि मोह ही दुःख का कारण है। संसार के पदार्थ ही बंधन का कारण हैं। हृदय आकाश में प्रकाश रूप आत्मा ही अनन्त सुखों का भंडार है और यह आत्मा ही मुक्ति का कारण है।

यह आत्मा ही स्वयं प्रकाश रूप सबका साक्षी (जाननेवाला), सदा विज्ञानमय है। समस्त अनित्य पदार्थों से अलग, नित्य, शुद्ध और ज्ञान स्वरूप है। यह आत्मा ही अपनी सत्ता से सबको प्रकाशित कर रहा है!

यह देह, इन्द्रियाँ, प्राण, मन और अहंकार ये सब अज्ञान से कल्पित और नाशवान् हैं, आत्मा सब उपाधियों से रहित है। अजर है, अमर है।

पृथ्वी ही जिसके पैर हैं, आकाश ही जिसका नाभि देश है, स्वर्ग ही जिसका मस्तक है, चन्द्र सूर्य जिसके नत्र हैं, सब दिशाएँ जिसके कान हैं, अग्नि ही जिसका मुख है, अनन्त समुद्र ही जिसका पसीना है, नदियाँ ही जिसकी नसें हैं, सब वृक्षावली ही जिसके रोम हैं—इस प्रकार जो कुछ भी है मेरे प्रभु का ही स्वरूप है।

मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव। —गीता

हे अर्जुन! सूत में मणियों की तरह यह सब जगत् परमात्मा में ही पिरोया हुआ है।

"मत्तः परतरं नान्यत्" परमात्मा से परे और कुछ भी नहीं है।

ध्यान का महत्व आर्य ग्रंथों में बहुत ऊँचा है। ध्यान के द्वारा कठिन से कठिन कार्य भी सुगम होजाते हैं। उत्कर्ष के लिए सभी को प्रभु की उपासना करनी आवश्यक है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य जगत् के महान् तार्किक, शास्त्रार्थ महारथी

पण्डित रामचन्द्र देहलवी

—श्री जगदीशप्रसाद आर्य एम०ए०बी०टी०

पण्डित रामचन्द्र जी देहलवी प्रायः देहलवी जी के नाम से सम्बोधित किए जाते थे। वे आर्य जगत ही नहीं, सारे भारत में अपनी विद्वत्ता, तार्किक शैली, शीरीजबानी, अथक परिश्रम व धुन के धनी आदि गुणों के लिए प्रसिद्ध थे। आप अंग्रेजी, हिन्दी, संस्कृत, अरबी तथा फारसी के विद्वान थे। आपने वैदिक साहित्य के साथ-साथ हिन्दू व जैन,बौद्ध,सनातनी, मुसलिम व ईसाई धर्म का भी गहन मंथन किया था।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के लम्बे इतिहास में मध्य प्रदेश के हृदय नीमच नगर का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा जाता रहेगा। आज भी वह विशाल वट वृक्ष उन अमर शहीदों की याद दिला रहा है,जिस पर १८५७में अनेक देश भक्तों को लटकाकर फांसी दी गई थी। इस महान विभूति को भी सन् १८८१ में राम नवमी के पवित्र दिन जन्म देने का श्रेय इस वीर व देश भक्त नगरी छावनी नीमच को प्राप्त है।

आपके पूज्य पिता जी मुन्शी छोटेलाल जी तेज मिजाज व धार्मिक प्रवृत्ति के थे। आपकी माता जी श्रीमती रामदेई दिल्ली की थीं आर्य संस्कारों में पली थीं। पण्डित जी को आर्य समाजी बनाने का श्रेय उन्हीं को है। आपने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा नीमच में पूर्ण की तथा बाद में डी० ए० वी० कालेज अजमेर से मिडिल तथा इन्दौर कालेज से एण्ट्रेन्स की परीक्षा उत्तीर्ण की। प्रतिभाशाली होने के कारण आप सदा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होते रहे। आपने अपने विद्यार्थी जीवन में भी अनेक कष्ट उठाये।

माताजी की मृत्यु हो जाने पर परिवार का भार आप पर आ पड़ा। १८ वर्ष की अल्पायु में ही आपका विवाह दिल्ली निवासी श्रीमती कमला देवी नामक विदुषी कन्या से हुआ। जीविकोपार्जन के लिए आपने नीमच के ही एक प्राइमरी स्कूल में अध्यापन कार्य प्रारम्भ कर दिया। किन्तु भला परमात्मा को जिस विभूति से महान् कार्य करवाने हों वह एक जगह कैसे ठहर सकती है। गृह कलह के कारण कुछ दिन बाद आप अपनी ससुराल देहली आ गये। यहाँ रेली ब्रदर्स नामक एक इंगलिश फर्म में आपने नौकरी कर ली। स्वाभिमानी होने के कारण आपने वहाँ से भी त्यागपत्र दे दिया।

आप श्वसुर के साथ बैठकर जेवर बनाने लगे। आपकी ईमानदारी की शोहरत दूर दूर तक फैल गई। यहाँ आपके ५ सन्तान और हुईं—जिनमें से ३

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

लड़कियाँ व १ लड़का काल के मुख में चले गये। पण्डित जी की आयु जब ३६ वर्ष की थी तभी आपकी धर्मपत्नी का देहावसान हो गया। इस प्रकार आप पर पुनः वज्रपात हुआ, किन्तु आप विचलित नहीं हुए।

आपकी आर्थिक स्थिति अच्छी न थी। कभी कभी तो माता के इस लाड़ले को अधपेट भूखे सोना पड़ता था। किन्तु आपने स्वाध्याय नहीं छोड़ा। धर्म प्रचार के लिए कहीं जातेतो ताँगा खर्च तक अपनी जेब से दे देते थे धर्म प्रचार की लगन थी कि लगातार १५ वर्ष (१९१० से १९२५) तक दिल्ली के फव्वारे तथा गाँधी ग्राउण्ड पर बिना नागा वैदिक धर्म के सत्य स्वरूप को बतलाते हुए विधर्मियों को मुँह तोड़ उत्तर देते रहे। प्रतिदिन हजारों की संख्या भीड़ में उपस्थित रहती। धुन के इतने पक्के थे कि पुत्र तथा पत्नि के देहावासान के दिन भी आपने कथा बन्द न रखी। इस काल में पण्डित जी की तार्किक शैली, तुरत बुद्धि व अनुपम कार्य प्रणाली का बोलबाला सारे भारत में हो गया। आप कुरआन पढ़ने के लिए एक हाफिज को गोद में उठाकर रात को घर लाते व दिन होने से पहले मसजिद में छोड़कर आते, क्योंकि हाफिज लूला था तथा मुसलमान अन्य मत वाले को कुरान पढ़ने देने के पक्ष में नहीं थे। इसी प्रकार बड़ी कठिनाई से आपने बाइबिल का अध्ययन किया। आप जब सस्वर आयत पढ़ते तो अच्छे अच्छे मौलवी दाँतों तले उंगली दबा लेते थे। फिरोजपुर वार्षिकोत्सव पर तो इसीलिए एक पठान लड़की ने आपको १०) रु० भेंट स्वरूप प्रदान किये।

आपका पहला शास्त्रार्थ बाड़ा हिन्दूराव में मुसलमानों से हुआ था जिसके निर्णायक न्यायाधीश रेवरेण्ड मिस्टर जुडास साहब थे। विजय का सेहरा आपके मस्तक पर बंधा। आप वैदिक शास्त्रार्थ समर में 'भीम' के नाम के नाम से विख्यात हुए। इसके बाद आपने जीवन भर घूम घूमकर भारत के प्रत्येक भाग में सभी मतावलम्बियों से हजारों शास्त्रार्थ किए। विपक्षी को देखकर आप उसी तरह प्रसन्न होते थे जैसे सिंह अपने शिकार को देखकर प्रसन्न होता है। पण्डित जी के शास्त्रार्थ की सर्वत्र धूम मच गई।

आपकी सफलता का राज यह था कि आपको सभी सिद्धान्तों का गम्भीर व सही अध्ययन था, आप कभी दूसरे धर्मावलम्बियों के आलिमों व नेताओंके लिए अपशब्द नहीं बोलते थे तथा सिद्धान्तों को स्वयं जीवन में धारण करते थे। आपका रहन सहन व भोजन साधारण था। व्यक्तित्व आकर्षक तथा स्वभाव सरल था। मुस्कराहट आपके चेहरे पर खेलती रहती थी। पण्डित जी तूफानी आदमी थे। प्रचार करने में आप सभी को मात देते थे। आपके प्रचार की गति का अनुमान इससे लगा सकते हैं कि आपने अकेले हैदराबाद में ७ बार में १२५ व्याख्यान दिये, तथा निजाम की नींद हराम कर दी। उसकी धर्मान्धताके विरुद्ध शंखनाद आप ही ने किया जिसके फल स्वरूप विशाल सत्याग्रह हुआ। पंजाब में हिन्दी रक्षा आन्दोलन के समय कैरों शाही के विरुद्ध विशाल जत्था लेकर सत्याग्रह की आग में कूद पड़े।

लगभग ८० वर्ष की आयु तक आप इसी प्रकार घूम घूमकर धर्मध्वजा फहराते रहे। इसके बाद आपने बाहर जाना लगभग बन्द सा कर दिया, क्योंकि एक रिक्शा दुर्घटना के कारण आपके बाँए हाथ में कम्पन हो गया था। इसके बाद पण्डित जी लगातार कमजोर होते चले गये।

४ फरवरी १९६८ के रेडियो ने यह दुख भरी खबर सारे संसार को सुना दी। वैदिक धर्म का प्रबल प्रहरी, शास्त्रार्थ केहरि, महर्षि का अनन्य भक्त ओ३म् का जाप करता हुआ ओ३म् में विलीन हो गया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

--वचनेश

कहानी

असली गुर-मन्त्र

कार्यालय की कैन्टीन। बाबू वर्ग का जमघटा। टेबिलों पर चल रहा था गप्पों का सिलसिला। रवीन्द्र जोर-जोर से कह रहा था 'ऐसे उपदेशक कई आए और चले गए। प्रवचनों का यह बुखार कुछ दिन तक चढ़ा रहेगा और फिर ये भी ढर्रे पर लग जाएँगे। जब भी कोई नया अफसर आता है उपदेशों की गुहार ऐसे ही लगाता है। कार्यालय में समय से आकर कुर्सी पर भी जम जाता है किन्तु 'चार दिन की चाँदनी फिर अंधेरी रात' वाली बात नहीं जानते हो क्या तुम लोग ? अभी अवस्थी साहब नए-नए आए हैं। तनिक यहाँ के वायु-मंडल में रम जाने दीजिए। फिर नमक की खान में न गले तो मेरा नाम बदल देना।"

सुधीर ने बीच में ही काटते हुए कहा "रवीन्द्र बाबू, इस गलतफहमी को दूर कर दीजिये। अवस्थी जी औरों से अनोखे लगते हैं। देखा नहीं तुमने, एक मास होने को आ गया किन्तु एक दिन भी न कभी दो क्षण विलम्ब से कार्यालय में आए और न ही कभी किसी से अनावश्यक बात ही की है उन्होंने।"

रवीन्द्र के मुख पर कई भाव आए और गए और फिर वह मेज पर मुट्ठी मारते हुए बोला 'रहने दो यार वक्त ही बताएगा कि कौन सही था और कौन गलत।"

लंच टाइम समाप्त हो गया। कैंटीन का शोरगुल शनैः शनैः कम होता गया, क्योंकि पक्षी अपने-अपने नीड़ों पर यानी बाबू वृन्द अपनी-अपनी सीटों पर वापस जा रहे थे।

×

मैनेजर श्री अवस्थी का कक्ष। स्टेनोग्राफर को आदेश दे रहे थे वह "रवीन्द्र भटनागर ज्योंही आज कार्यालय में आएँ उन्हें मेरे समक्ष उपस्थित होने के लिए कह दीजियेगा।"

कुछ ही क्षण बाद रवीन्द्र द्वार खोल कर कार्यालय में प्रविष्ट हुआ। अभी उसने अपनी मेज पर फाइलों का ताना-बाना पूरा ही था कि स्टेनोग्राफर का कोकिलकंठ गूंज उठा "भटनागर जी, आपको साहब ने याद किया है।"

आस पास की मेजों पर डटे सभी बाबुओं की निगाहें रवीन्द्र पर जाकर रुक गईं। वे एकटक उसकी ओर निहार रहे थे। किन्तु रवीन्द्र सर्वथा लापरवाह सा उठा, खाँसा और उसने एक नजर में सारे कमरे को भर सा लिया। जेब से कंघी निकाली, केशराशि पर जल्दी से दो चार बार घुमाई और मैनेजर महोदय के कक्ष पर जा पहुँचे। द्वार चपरासी ने खोला और रवीन्द्र ने भीतर प्रवेश करते हुए पूछा "मे आई कम इन सर' (क्या मैं भीतर आ सकता हूँ)?"

मैनेजर के मुख से निकला "येस कम इन।" (हाँ, भीतर आ जाओ)

रवीन्द्र आगे बढ़ा और मैनेजर के समक्ष नमस्कार कर खड़ा हो गया।

मैनेजर श्री अवस्थी बोले "मिस्टर भटनागर, कल आपने पुनः टेलीफोन पर सूचना देकर अपने कर्त्तव्य की इति श्री समझ ली और अवकाश मना लिया। आज भी पूरा एक घंटा विलम्ब से कार्यालय में पधारे हैं। ऐसा लगता है कि आपको कार्यालय के अनुशासन की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कोई चिन्ता नहीं।"

"ऐसा तो नहीं है सर। कल अचानक ही मेरी पत्नी बहुत बीमार हो गयीं थीं और आज भी डाक्टर के यहाँ से औषधि आदि लेते और फिर घर पर देकर आने के कारण कार्यालय आने में विलम्ब हो गया। मैं विवशता में ही ऐसा करता हूँ, हुजूर। मेरा स्वभाव ऐसा नहीं।"

"कुछ भी कहो, किन्तु मैं जबसे यहाँ आया हूँ, तभी से यह देख रहा हूँ कि आप अपनी ड्यूटी के प्रति लापरवाह हो। खैर। आज मैं तुम्हें चेतावनी दे रहा हूँ। भविष्य में आपने इस प्रकार अचानक अवकाश मनाया तो फिर मुझे तुम्हारे विरुद्ध कार्रवाई करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा।"

रवीन्द्र बोला "मैनेजर साहब! आगे आपको शिकायत का अवसर कदापि नहीं दूँगा।"

उसने नमस्ते की और मैनेजर के कक्ष से बाहर आ गया। चुपचाप अपनी सीट पर पहुँचा और एक बार कार्यालय के अन्य सहयोगियों पर उड़ती सी नजर डाली तथा फिर उसकी उगलियाँ तेजी के साथ टाइपराइटर पर चल पड़ीं।

मध्याह्न भोजन के समय कैंटीन में बाबुओं का जमघटा हर रोज के समान लगा। एक टेबिल पर रवीन्द्र को घेरे चार पाँच मित्रों की मंडली बैठी थी। दिनेश बोला "रवीन्द्र बाबू आज तो मैनेजर साहब से काफी झाड़ खाई है न। तबियत प्रसन्न हो गई होगी हजूर की।"

"अरे जा, वह बेचारा मैनेजर क्या खाकर मेरी तबीयत खुश करेगा। उसे तो मैंने ऐसा अड्डु लगया कि याद करेगा बेचारा।"

"ऐसा क्या जवाब दिया था तुमने रवीन्द्र—" हरीश ने प्रश्न किया।

"अरे ये तो उस्तादों के नुस्खे हैं, बहुत दिनों चेला धर्म निभाओगे, तब इसका मर्म समझ पाओगे।" रवीन्द्र ने खटाक से उत्तर दे मारा।

बातचीत का सिलसिला कुछ देर तक इसी तरह चला और फिर सभी कार्यालय में अपने अपने स्थान पर आ डटे।

× × ×

दो तीन दिन बाद।

आज फिर रवीन्द्र ११ बजे के लगभग कार्यालय पहुँचा था। उसके पहुँचते ही चपरासी ने बताया कि "साहब ने हुकुम दिया था कि रवीन्द्र बाबू जैसे ही आएँ, सीधे मेरे कमरे में भेज देना।"

रवीन्द्र दो क्षण ठहरा और फिर मुंह लटकाए मैनेजर के कमरे में दाखिल हो गया। जाते ही बड़े कायदे से साहब को सलाम झुकाया और सहमा सा खड़ा हो गया।

मैनेजर श्री अवस्थी गरजे "क्या बात है भटनागर। चेतावनी दिये अभी तीसरा दिन भी नहीं बीता, आज फिर तुम ११ बजे कार्यालय आए हो। लगता है कि तुमने लेट आना और छुट्टी मनाना अपनी आदत ही बना ली है। आज मुझे तुम्हारे विरुद्ध कार्रवाई करनी ही पड़ेगी।"

तभी रवीन्द्र गिड़गिड़ाया और बोला "हजूर, आज मेरी मजबूरी ने ही मुझे 'लेट' करायी है। मैं तो घर से ठीक ९ बजे निकला था। बस में आधा घंटा ही लगता है किन्तु अचानक ही रास्ते में बस का 'ब्रेक डाउन' हो गया। और फिर सभी यात्रियों को उसमें से उतरना पड़ा। फिर आप तो जानते ही हैं कि दिल्ली में बस लेना कितना परेशानी का काम है। 'पीक आवर्स' में तो बड़ी ही टेढ़ी खीर है। खैर, पौने ११ बजे दूसरी बस मिली और फिर मैं ११ बजे हाँफता भागता दफ्तर आया हूँ, बस से उतर कर।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मैनेजर महोदय शांत रहे और अपना क्रोध पी गये। फिर बोल उठे "आगे से मैं कोई बहाना नहीं सुनूँगा। आज एक अवसर और दिए देता हूँ मिस्टर रवीन्द्र इसे अन्तिम 'वार्निंग' ही समझो।"

रविन्द्र ने बड़े तपाक से हाथ जोड़े और नमस्कार कर कमरे से बाहर आ गया।

× × ×

सारे कमरे में सन्नाटा सा था। रवीन्द्र के मेज पर वापस पहुँचते ही आसपास के क्लर्कों की भीड़ जमा हो गई। सभी पूछने लगे "क्यों भाई, आज क्या हुआ? अब तो लगता है कि कुछ न कुछ दंड जरूर पाओगे।"

अरे नहीं, अपने को गुरु के दिए कई मंत्र याद हैं। आज एक और मंत्र पढ़ दिया और जान बच गई। कच्ची गोलियाँ नहीं खेलीं भटनागर ने। मैनेजर साहब 'डाल डाल तो हम पात पात।'

× × ×

सायंकाल। कार्यालय का कार्यकाल समाप्त हुआ। बाबू एक एक कर अपनी साइकिलें और स्कूटर आदि स्टैन्ड से लेकर अपने अपने घरों को प्रस्थान करते रहे। रवीन्द्र के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। मुख पर पसीना झलक रहा था और कभी किसी से तो कभी किसी से पूछ रहा था "आपने मेरी साइकिल तो नहीं देखी।" किसी को वह साइकिल का हुलिया बताता तो किसी को उसके रंग का विवरण सुनाता जाता। किन्तु कोई भी न बता पा रहा था कि उसने ऐसे रंग ढंग की साइकिल कहीं देखी है।

क्षंततः वह दरवान से पूछने गया। चौकीदारों से एक एक कर पूछताछ कर ली, किन्तु कहीं से भी कोई समाधानपूर्ण उत्तर न मिल पाया। निराश, हताश तथा उदास रवीन्द्र हाँफता-हाँफता दो तीन अन्य सहयोगियों के साथ मैनेजर महोदय के कक्ष की ओर लपका। अभी मैनेजर श्री अवस्थी अपने कक्ष में कार्यरत थे। उसने बैल दी। द्वार खुला। वह बोला "साहब आज मेरी साइकिल कार्यालय के द्वार से गायब हो गई है।"

"क्या कहा रवीन्द्र, तुम्हारी साइकिल? तुमने तो आज कार्यालय में विलम्ब से आने का कारण पूछे जाने पर 'मुझे बताया था कि तुम आज बस का 'ब्रेक डाउन' हो जाने के कारण 'लेट' आये हो फिर साइकिल कहाँ से आगई?"

"जी, जी वह तो···" ये शब्द कहने के बाद रवीन्द्र का कंठ रुँध सा गया।

'अच्छा तो तुमने झूठ बोला था।" आक्रोशपूर्ण मुद्रा में अवस्थी गरजे।

"मैनेजर साहब बात यह है कि···"

बात वात कुछ नहीं रवीन्द्र, झूठ के पाँव नहीं होते। हो सकता है कि तुम्हारी साइकिल का लापता होना भी तुम्हारी मिथ्यावादिता का ही प्रभु द्वारा दिया गया दंड हो।

"जी, जी, मैं अपनी भूल स्वीकार करता हूँ। वास्तव में गलती की थी मैंने। अब तो मुझे इस महंगाई के जमाने में अपनी गलती की बहुत बड़ी सजा मिल गयी है।"

तभी दिनेश बोल उठा "पुलिस में साइकिल गुम हो जाने की रिपोर्ट तो करते चलो।"

वे जाने ही लगे थे कि श्री अवस्थी बोल उठे "सुनो रवीन्द्र, कार्यालय के बाहर खड़ी एक साइकिल चपरासी ने स्टोर में दोपहर को रखवाई थी। शायद तुम्हारी ही होगी। एक बार देख तो लो, फिर पुलिस स्टेशन जाना।

मैनेजर ने चपरासी को साइकिल स्टोर से लाने का आदेश दिया। वह साइकिल लेकर आया तो रवीन्द्र के दम में दम आया।

और फिर लज्जा का एक ऐसा भाव उसके चेहरे पर उभरा कि वह मैनेजर तथा साथियों के समक्ष आँख न उठा सका।

आज ही मिला था उसे वास्तविक गुरु मंत्र।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

खोजपूर्ण वैदिक साहित्य

१. वेदों का यथार्थ स्वरूप–
पं० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड की एक सशक्त रचना, जिसे पढ़ कर 'वेद' के प्रति श्रद्धा उभरनी आवश्यक है। सभी संशयों का प्रभावपूर्ण समाधान। सजिल्द मूल्य ८)

२. संक्षिप्त महाभारत–
महाभारत का यह लघु संस्करण स्व० महात्मा हंसराज जी ने प्रकाशित कराया था। अब पुनः प्रस्तुत है कपड़े की बढ़िया जिल्द में मूल्य ६)

३. ज्योति – स्तंभ
१२ शीर्षस्थ आर्यसमाज के नेताओं के जीवन चरित्र। १२ आर्ट पेपर पर चित्रों सहित मूल्य ३)

४. बोध – रात्रि [महाकाव्य] ऋषि दयानन्द का यह अनुपम काव्यमय जीवन चरित्र बर्मा में लिखा गया था। अपने ढंग का अनूठा ग्रंथ है। मूल्य ३)

५. आर्य क्रांतिकारी—बनारसी सिंह
जिन वीरों ने वैदिक सिद्धान्तों से प्रेरणा लेकर अपने जीवन को राष्ट्र हित के लिए आहुति दी, उनकी अनुपम गौरव गाथा मूल्य ३)

६—शतपथ ब्राह्मण (प्रथम कांड) शतपथ ब्राह्मण का यह अपूर्व भाष्य स्वर्गीय स्वामी समर्पणानन्दजी महाराज को जीवन भर की साधना का सुपरिणाम है। ४०० से अधिक पृष्ठों का यह ग्रन्थ अपनी उपमा आप ही है। बढ़िया कपड़े की जिल्द के इस ग्रंथ का मूल्य है— १५)।

७--यजुर्वेद-सामवेद भाष्य—यजुर्वेद का भाष्य महर्षि दयानन्द कृत और सामवेद भाष्य आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री कृत एक ही सुनहरी जिल्द में प्रकाशित किया गया है। लागत मूल्य ५१)

८—ऋग्वेद (६ मण्डल)–
महर्षि दयानन्द कृत भाषा भाष्य मूल्य— ५१)

९---यजुर्वेद भाष्य
गत्ते की जिल्द मूल्य १४)। कपड़े की सुनहरी जिल्द १८)।

जन-ज्ञान-प्रकाशन नई दिल्ली-५

-सम्पादक राकेश रानी द्वारा सैनी प्रिण्टर्स, दिल्ली-६ में छपा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

५६७ हरध्यानसिंह मार्ग,
नई दिल्ली-७

१८७७

रजिस्ट्रेशन नं०
डी-(सी०) २०१.

जवाहर लाल नेहरू

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi